।।राम।।

मानस–हनुमानचालीसा

पनामा (यु.एस.ए.)

।। रामकथा ।।

मोरारिबापू

चारों जुग परताप तुम्हारा। है परसिद्ध जगत उजियारा।
साधुसंत के तुम रखवारे। असुर निकंदन राम दुलारे।।

|| **रामकथा** ||
मानस-हनुमानचालीसा-९

मोरारिबापू
पनामा, यु.एस.ए.
दिनांक : १९-०७-२०१४ से २७-०७-२०१४
कथा-क्रमांक : ७६३

प्रकाशन :
अपैल, २०१५

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

राम-कथा पुस्तक प्राप्ति
सम्पर्क-सूत्र :
ramkatha9@yahoo.com

ग्राफिक्स
स्वर अेनिम्स

प्रेम-पियाला

पनामा (यु.एस.ए.) में ता.१९-७-२०१४ से २७-७-२०१४ के दिनों में मोरारिबापू ने 'मानस-हनुमान चालीसा' भाग-९ का गान किया। श्री हनुमानजी ग्यारहवें रुद्र के अवतार है इसलिए मोरारिबापू की व्यासपीठ का एक संकल्प रहा कि 'हनुमानचालीसा' पर ग्यारह बार बोला जाय।

श्री हनुमानजी महाराज का भिन्न-भिन्न कोण से परिचय देते हुए बापू ने कहा कि ''हनुमानजी महावीर है। हनुमानजी महादेव है। भगवान शिव ग्यारहवें रुद्र के अवतार में हनुमानजी के रूप में आये हैं, इसलिए वो महादेव है। हनुमानजी महायोगी है। हनुमानजी महाज्ञानी है। हनुमानजी महादानी है। हनुमानजी महाभोगी है। आप को आश्चर्य होगा, महाभोगी! लेकिन यहां भोगी का संदर्भ बदल जाता है। संसार में जितने दास हुए हैं उनमें हनुमानजी महादास है; उनके समान कोई दास नहीं। श्री हनुमानजी महादूत है। श्री हनुमानजी महात्यागी है। और श्री हनुमानजी महावैरागी है।'' तदुपरांत बापू ने कभी लंकादहन करते हुए, कभी पहाड़ लाते हुए, कभी वीरासन में बैठे हुए, कभी विकटरूप, कभी भीमरूप या कभी कपीन्द्ररूप जैसे श्री हनुमानजी महाराज के विभिन्न रूपों का निर्देश भी किया।

'श्री हनुमानजी में अग्नितत्त्व, सूर्यतत्त्व, चंद्रतत्त्व, दीपकतत्त्व, मणितत्त्व सबकुछ है; इसलिए वो जगत को उजियारा दे सकता है।' ऐसा कहते बापू ने श्री हनुमानजी महाराज को प्रकाश-पुंज के रूप में प्रस्तुत किया। साथ ही बापू ने ऐसा सूत्रपात भी किया कि 'हनुमान और 'हनुमानचालीसा' महाऔषध है।'

सुविदित है कि मोरारिबापू की व्यासपीठ श्रोताओं के सवालों का भी स्वीकार-समादर करती है। 'श्री हनुमानजी साधु-संत के रखवाले हैं, तो सामान्यजन का क्या?' ऐसे एक प्रश्न के प्रत्युत्तर में बापू ने पंचतत्त्व में व्याप्त हनुमानजी का ऐसे सवालों के साथ महिमागान किया, ''श्री हनुमानजी प्राणवायु है। साधु श्वास ले, शैतान में प्राणवायु नहीं होता? अग्नि साधु को मदद करे, शैतान को मदद ना करे? जल साधु को जीवन दे, शैतान को न दे? पृथ्वी साधु को रहने दे, असाधु को न रहने दे? और आकाश साधु को रखे अपनी बाहों में और शैतान को ठुकरा दे? हनुमानजी पांचों तत्त्व है। ये पांचों तत्त्व यदि सब का रक्षण करता है, तो इसमें पापात्मा-पुण्यात्मा का भेद नहीं होता।''

पनामा में गाई यह 'मानस-हनुमानचालीसा' की नववीं कथा में मानो पूर्णांक में 'हनुमानचालीसा' का सात्त्विक-तात्त्विक संवाद हुआ।

– नीतिन वडगामा

मानस-हनुमानचालीसा
॥ १ ॥

हनुमंततत्त्व समान विश्व में कोई बिनसांप्रदायिक नहीं है

चारों जुग परताप तुम्हारा। है परसिद्ध जगत उजियारा।
साधुसंत के तुम रखवारे। असुर निकंदन राम दुलारे।।

बाप, भगवत्कृपा से रामकथा के नाते फिर एकबार हम यहां एकत्रित है। सबसे पहले पनामा देश के आदरणीय प्रेसिडन्टसाहब, जिनकी धर्मपत्नी आदरणीय बहनजी, व्यासपीठ को आदर दिया; मैं इतने ही भरपूर भाव से आदरणीय प्रेसिडन्टमहोदय आप और आपके देश में बसे सभी मेरे भाई-बहन, सबके प्रति मेरी शुभकामना और मेरा आदर व्यक्त करता हूं। पनामा देश में भारत की ओर से राजदूत के रूप में यहां सेवा समर्पित कर रहे हैं वो भारत के राजदूत आदरणीय बहनजी, आप का भी स्वागत है। मैं आदर व्यक्त करता हूं। हमारे बहुत कथाप्रेमी संन्यासी पूजनीय स्वामीजी महाराज, जो द्वारिका से आये है, मेरा प्रणाम। आप सबने निमित्त बनके रामकथा के इस सेवाकीय सत्संग को आयोजित किया; मैं आरंभ में ही आप सबको बहुत धन्यवाद देता हूं।

'हनुमानचालीसा' पर साथ में मिलकर संवाद करें। 'मानस-हनुमानचालीसा', यहां ये योग समझो, पूर्णांक में 'हनुमानचालीसा' का संवाद होने जा रहा है। ये नववीं कथा है। अभी दो बाकी है, कुल ग्यारह करना है। क्योंकि हनुमानजी ग्यारहवें रुद्र के अवतार है। मेरी व्यासपीठ का एक संकल्प रहा कि ग्यारह बार 'हनुमानचालीसा' पर इस जीवन में एकबार बोल लिया जाय। 'हनुमानचालीसा' के जो नायक है हनुमानजी वो गुरु है। हनुमानजी के माध्यम से हम थोड़ी गुरु की चर्चा कर लें।

तो, कथा का प्रधान विषय रहेगा 'मानस-हनुमानचालीसा।' हनुमानजी के नाम के साथ, मूलनाम हनुमान है, उसके आगे-पीछे विशेषण बहुत है। और ये सब विशेषण छोटे लगते हैं! ये इतने पूर्ण है। श्री हनुमानजी लंका पर विजय के बाद रामजी के संग अयोध्या लौटते हैं और बीच यात्रा से भगवान हनुमानजी को भेज देते हैं कि जल्दी अयोध्या पहुंच जाय और वहां की स्थिति क्या है वो देखो, भरत की क्या स्थिति है? चौदह साल पूरा होने में एक दिन

बाकी है, लेकिन चौदह साल की गिनती में, कहीं भरत की गिनती में एक-दो दिन इधर-उधर हो गये, हमारे गणित में गडबड हो जाये और भरत अभी प्रभु नहीं आये, ऐसा समझकर प्राणत्याग न कर दे! तो बहतर है हनुमान, तू पहले पहुंच जा और खबर कर दे कि ठाकुर आ गये हैं।

तो, हनुमानजी नंदिग्राम पहुंचते हैं अयोध्या में; और एक दिन बाकी है भरत की गिनती में भी और बड़ा माहौल खबर नहीं, राम नहीं आये तो क्या होगा? इस स्थिति में डूबे है! भरत की प्रेमदशा का वर्णन तो भला कौन करे? ऐसी स्थिति में डूबते हुए व्यक्ति के लिए कोई जलपोट आ जाय, अचानक जहाज मिल जाय और जितनी खुशी हो इतनी खुशी भरतजी को होती है। उनको हनुमानजी थाम लेते हैं। विरहसिंधु में भरत करीब-करीब डूबने को ही थे और शुभ समाचार हनुमानजी देते हैं तब पहलीबार हनुमानजी अपने मुख से अपना नाम बोलते हैं। इससे पहले हनुमानजी ने मेरा नाम ये है, ऐसा नहीं कहा है। इसलिए तुलसीजी लिखते हैं -

मारुतसुत मैं कपि हनुमाना।

नामु मोर सुनु कृपानिधाना।।

जब भरतजी ने पूछा, इतनी मंगलमय खबर देनेवाला तू है कौन? तब परिचय में कहते हैं, 'मैं पवनपुत्र हूं, वायुपुत्र कपि हूं और हे कृपानिधान, मेरा नाम हनुमान है।' तो, हनुमानजी 'सकलगुणनिधानं' होने के कारण उसमें सब कुछ है, लेकिन उसका नाम चार अक्षरवाला हनुमान है। बाकी हम जानते हैं, हनुमानजी महावीर है। तुलसीदर्शन को इकठ्ठा करके मैं आपके सामने पेश करने की गुरुकृपा से विनम्र कोशिश करता रहूंगा।

हनुमानजी महावीर है; हनुमानजी महादेव है; 'वानराकार विग्रह त्रिपुरारी' है। शंकर अवतार नहीं लेते। भगवान शिव अजन्मा और अविनाशी है। अवतार-परंपरा में शंकर नहीं आते फिर भी उसके रुद्रों के अवतार में ग्यारहवें रुद्र ये हनुमानजी के रूप में आये हैं, इसलिए वो महादेव है।

हनुमानजी महायोगी है। इससे महान योगी खबर नहीं! हनुमानजी महाज्ञानी है। 'ज्ञानिनामग्रगण्यम्।' पांचवां, हनुमानजी महादानी है। हनुमानजी जैसा कोई दाता नहीं। हनुमानजी महाभोगी है; आपको आश्चर्य होगा, महाभोगी! हनुमानजी के समान विश्व में कोई भोगी नहीं। यहां भोगी का संदर्भ बदल जाता है। संसार में जितने दास हुए हैं, दास्यभक्ति के जितने महापुरुष हुए हैं, उनमें श्री हनुमानजी महादास है। उनके समान कोई दास नहीं। आगे, श्री हनुमानजी महाराज महादूत है। राम के समान कोई महान नहीं, राम के समान राम, इसलिए राम महानायक है और इस महानतत्त्व परमात्मा राम उनके ये दूत होने कारण श्री हनुमानजी महादूत है। यद्यपि वो कहते हैं -

रामदूत मैं मातु जानकी।

सत्य सपथ करुनानिधान की।।

ये प्रमाण है। तो, ये महादूत है। श्री हनुमानजी महात्यागी है। उनके समान कोई त्यागी नहीं। ये सभी जो हनुमानजी के परिचय के लिए जो बोले जा रहे शब्द, उसमें पूरा का पूरा श्री हनुमानजी का चरित्र उजागर होता है। और श्री हनुमानजी महावैरागी है। त्याग और वैराग में अंतर है। ये तो हमारी श्रद्धा है कि हम हनुमानजी को सोने का मुकुट धराये, गदा सोने की बना दे, कोई माला सोने की पहनाये; ये हमारी श्रद्धा है, सोने पर सोना क्या चढ़े? 'हेमशैलाभदेहं;' हनुमान मेरी दृष्टि में फ़कीर है। केवल रामप्रेम से लबालब भरे श्री हनुमान महाअनुरागी है; परमअनुरागी है श्री हनुमानजी महाराज। तो, ऐसे हनुमान, उनकी विशेष रूप में बात करने की मेरी गुरुकृपा से मैं आपके सामने कोशिश करूंगा।

हनुमंततत्त्व के समान विश्व में कोई बिनसांप्रदायिक नहीं है। एक ऐसा परमतत्त्व है हनुमान; पूर्वग्रह की मूढ़ता या पूर्वग्रंथियों से कोई कुबूल ना करे तो कौन जिद्द करे? केवल अनुराग की दृष्टि से बाबा का दर्शन किया जाय। ये तबाह कर देगा। पाकिस्तान के मरहूम शायर, बहुत बड़े उस्ताद शायर अहमद फ़राज़साहब का एक शे'र है -

बरबाद करने के तो कई तरीकें थे फ़राज़,

फिर भी महोब्बत का चुनाव क्यों किया?

ये तबाही अनगनित उन्नति करेगा। हनुमान को नकारा नहीं जा सकता। मूढ़तापूर्ण पूर्वग्रंथियों से कोई ना माने तो जिद्द क्यों करे? हनुमान कहते हैं, मैं वायुपुत्र हनुमान। तो बिना हवा, बिना वायु, बिना प्राणवायु जीवन में कौन जी सकता है? बताईये। जो गुरु होता है; श्री हनुमानजी गुरु है, परमगुरु है। 'हनुमानचालीसा' अंतर्गत ये पंक्ति बहुत जगजाहिर है -

जय जय जय हनुमान गोसाई।

कृपा करौ गुरुदेव की नाई।।

आप जानते हैं, जो परमगुरु है, सही में गुरु है। एक विचार भी गुरु हो सकता है। यदि वो गुरु है तो व्यक्ति भी गुरु हो सकती है। गुरु होना चाहिए; गुरु के जो लक्षण होने चाहिए वो है, तो कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। गुरु व्यक्तित्व भी है और अस्तित्व भी है, लेकिन गुरु के क्रियाकलाप से पता लगता है कि ये गुरु है कि नहीं। कोई भी गुरु हो, जिसका नाम अवधूती में अंकित हो चुका हो ऐसे बुद्धपुरुष चार काम करता है।

गुरु पहले शिकार करता है। प्लीज़, चोंकियेगा मत! शिकार का मेरा मतलब जो मैंने सुना, हमारी अंदर जो अनावश्यक वस्तुयें पड़ी है, उसको हमने दिलोजान से पकड़ रखी है अनावश्यक, उसका वो शिकार करता है। जैसे गोस्वामीजी अपने आप को राम के सामने खुला छोड़ देते हैं कि मेरे में से इतनी वस्तु आप नष्ट कर दो, शिकार कर दो।

कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च।

यहां गुरु आक्रमक लगता है, लेकिन एक सर्जन केन्सर का ओपरेशन करेगा, तो अपने शस्त्र लेकर ओपरेशन करता है। गुरु अपने आत्मशास्त्र से, शस्त्र से नहीं, गुरु अनावश्यक से अभद्र, अरुचिकर जो पवित्रधारा के बाधक वस्तु है, इन सबको खत्म कर देता है। गुरु स्वीकार कर देता है कैसा भी हो, निषेध ना हो। अभी-अभी हमें नहीं अच्छा लगा था, जिन विकारों, जिन दुष्कृत्य, जिन गलती हमने दिलोजान से लगा रखा था, उसका उसने हनन कर दिया ऐसे साधक को जो स्वीकार भी करता है और सत्कार करता है। किसी के भाल में तिलक करो ये सत्कार है। किसी के गले में माला डालो ये सत्कार है। आश्रित का गुरु सत्कार करता है। हम गुरु का सत्कार करे, पूजा करे, ठीक है; गुरु आश्रित का सत्कार करता है। माला मानी मैं कंठी-माला इसी बातों में नहीं जा रहा हूं। माला मानी एक सत्कार।

मेरे श्रोता भाई-बहन, आप मेरे भगवान हैं। मैं आप सबको भगवान समझता हूं। मुझे ओर कोई भगवान की खोज नहीं। मुझे सबकुछ मिल गया। ओर इस जड़-चेतन में जिसको भगवान न दिखाई दे उसको क्या खाक मिलेगा? मिलेगी तो मूर्तियां मिलेगी! मूर्तियां खराब नहीं है, लेकिन भगवता हमारे दिल में हो।

हजारों दैरो-हरम ने लिबास बदले।

मैखाना अभी तक मैखाना ही है।

रामकथा रामकथा ही रहेगी। ये कोई धार्मिक सम्मेलन नहीं है। ये प्रेमयज्ञ है। पूरा संसार जानता है, मैं कथा को ज्ञानयज्ञ भी नहीं कहता हूं। ज्ञान की हमारी औकात नहीं; ज्ञानी लोग तो थे जनक, वशिष्ठ, महापुरुष। हम कहां ज्ञानी? ये प्रेमयज्ञ है, इसी प्रेम के अर्थ में शराबखाना अभी तक शराबखाना ही है। सत्संग, भगवत्चर्चा, विशुद्ध सत्य, प्रेम, करुणा की चर्चा वो ही है।

तो, ये सत्कार गुरु करे। एक आदमी गुरु की खोज में निकलता है। लोगों से पूछता है, आपकी दृष्टि में कोई गुरु ऐसा है, मुझे इनके शरण में रहना है। तो, जिसको जो अच्छा लगता वो बताता है। ये आदमी वहां जाता है, तो उसने देखा, वो कुछ बोलता ही नहीं! तीन दिन बैठा उनके पास, लेकिन वो कुछ बोलता ही नहीं! कोई किसका नाम बताता; वहां गया तो वो गुरु बहुत बोलता था! बोलता ही रहता था! उसको लगा, ये कुछ ज्यादा ही मुखर है! ये कोई गुरु हो सकता है? फिर तीसरी जगह गया। तो, वो गुरु तो हाडपिंजर जैसा हो गया था! तप करे, उपवास करे, कुछ खाये ना, पीये ना, अत्यंत तपस्वी! खोजी को लगा कि ये तो चेहरे पे नूर ही नहीं! किसी ने और नाम दिया तो वहां गया तो गुरु छप्पन भोग खा रहा था! लगा कि ये भी कोई गुरु लगता नहीं, सब खाता है! एक साल के अन्वेषण के बाद एक आदमी ने कहा कि ये है; तू वहां पहुंच जा, ये आखिरी है, उसमें तुने गुरु को नहीं देखा तो गया! वो गया; एक महापुरुष बैठा था और देखते ही उनको लगा कि यहां मेरी खोज पूरी हो गई। 'भगवन्, मैं गुरु की खोज में था; बहुत भटका! आपको देखकर लग रहा है कि आप बिलकुल वो है।' तो, ये महापुरुष ने उसको कहा कि 'ये भी तेरी भूल है! तू खोजने निकला है, मेरी खोज भी चालू है!' बोले, 'आप किसको खोज रहे हो?' खोजी ने कहा, 'मैं परमगुरु की खोज में हूं।' तो गुरु ने कहा, 'मैं परमशिष्य की खोज में हूं।' काम तो तभी होगा कोई परमगुरु और परमशिष्य का मिलन हो।

ये पूरा ब्रह्मांड ब्रह्ममय है। मेरा श्रोता मेरी दृष्टि में भगवान है; यदि दृष्टि हो तो। गुरु परमशिष्य को खोजता है। मैं किसको तिलक करूं? मैं किसका चरणस्पर्श करूं? ये तीसरा स्थान है सत्कार और चौथा और आखरी अंतिम पडाव है साक्षात्कार, 'चिदानंद रूपः शिवोऽहम् शिवोऽहम्।' तो, ऐसे गुरु हनुमान है।

जो यह पढै हनुमान चालीसा।

होय सिद्धि साखी गौरीसा।।

तुलसीदास सदा हरि चेरा।

कीजै नाथ हृदय महँ डेरा।।

वेदों का भाष्य उपनिषद है, अवश्य। सीधा वेद को आत्मसात् करना मुश्किल है। उपनिषद का निचोड़, सारसत्त्व 'श्रीमद् भगवद्गीता' है। और'भगवद्गीता' में जो योग है,'रामचरित मानस'में-रामकथा में प्रयोग में परिभाषित किया गया। वहां सूत्र है, रामकथा में सभी योग प्रयोग करके दिखा गया; सूत्रों के चरितार्थ करके दिखाया। तो, वेदों का भाष्य उपनिषद; उपनिषद का सार 'भगवद्गीता'; 'भगवद्गीता' का सार 'श्री रामचरित मानस' और 'रामचरित मानस' का भाष्य 'सुन्दरकांड' और 'सुन्दरकांड' का भाष्य है, 'श्री हनुमानचालीसा।' ये सार है।

'रामचरित मानस' के सात सोपान आप जानते हैं। 'बालकांड' के आरंभ में तुलसीजी ने मंगलाचरण किया। सात मंत्रों में मंगलाचरण किया। फिर गोस्वामी को 'रामचरित मानस' के रचयिता को श्लोक को लोक तक पहुंचाना था; हम जैसे सामान्य आदमी तक रामकथा को पहुँचानी थी, इसलिए बिलकुल ग्राम्यभाषा में पांच सोरठें लिखें।

जो सुमिरत सिधि होइ गन नायक करिबर बदन।

करउ अनुग्रह सोइ बुद्धि रासि सुभ गुन सदन।।

बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि।

महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।।

पांच सोरठें में 'रामचरित मानस' का आरंभ होता है। गणेश, शिव, दुर्गा, भगवान सूर्यनारायण और भगवान विष्णु; जगद्गुरु आदि शंकराचार्य भगवान ने वैदिक परंपरा के प्रवाही परंपरा के आश्रितों के लिए पंचदेवों की अनिवार्यता बताई थी; गणेश, दुर्गा, शिव, विष्णु और सूर्य। आखिर में गोस्वामीजी ने गुरुवंदना की है और 'रामचरित मानस' का पहला प्रकरण, जिसको मेरी व्यासपीठ 'मानस-गुरुगीता' कहती है।

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।

सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।

गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन।

नयन अमिअ दृग दोष बिभंजन।।

पहले प्रकरण में गुरुमहिमा का गायन किया गया। अद्भुत है ये गुरुवंदना! तुलसी ने यहां गुरु से ज्यादा गुरुपद पर बल दिया है। हमारे आदरणीय दलपत पढियारसाहब, आपने कभी 'अस्मितापर्व' में कहा था कि गुरु कमजोर हो सकता है, लेकिन गुरुपद कभी कमजोर नहीं हो सकता। ये बड़ा सुंदर सूत्रपात आपने कभी किया था। तुलसी भी व्यक्तिवादी नहीं है। गुरुपद जो एक प्रवाही परंपरा है; गुरु एक प्रवाह है। तो, गुरुपद की वंदना की, गुरुपदरज की वंदना की, गुरुचरण की वंदना की।

ओशो के मेगेझिन में लिखा था कि पूर्णिमा तो कितनी है; तो गुरुपूर्णिमा वर्षाऋतु में क्यों? ओशो का तर्क अच्छा लगा, प्रिय लगा। आपने कहा कि गुरु ये बादलों में छिपा चांद है। आपने अर्थ लगाया कि गुरु चंद्रमाँ है। गुरु को सूरज नहीं कहा; ये बड़ी प्यारी बात कही है। और चंद्र के पास अपना प्रकाश नहीं है, ये तो सूरज से लेकर बांटता है। ये बहुत अच्छा अर्थ है। गुरु वो

है, जो परमात्मा से लेकर उसका प्रतिफल हम जैसों को बांटता है। गुरु सूर्य हो जायेगा तो हम सह नहीं पायेंगे। ताप है सूरज के पास। तर्क क्या, ये पूरा तथ्यपूर्ण लगता है। फिर आपने कहा कि छोटें-बड़ें बादल की घटायें ये सब शिष्य है। और गुरु सदैव शिष्यों में छिपा रहता है, शिष्यों से घिरा रहता है। कभी-कभी क्या होता है कि शिष्य गुरु को दिखने ही न दे! कुछ बादल भरे होते हैं, कुछ बादल खाली होते हैं। सद्गुरु के पास कई शिष्यों कामना से भरे हुए हैं। कोई न कोई कामना; और ये कामना हमें मलिन बनाती है। कामना के कारण बादल श्याम दिखते हैं। और कुछ शिष्य निष्काम उज्ज्वल होते हैं। उसकी आड में रहा चांद भी अच्छा लगता है। व्यासपीठ को कहने दो, जबरदस्त पवन का सपाटा आये तो बादल इधर-उधर हो जाते हैं, चांद कभी इधर-उधर नहीं होता। गुरु कहां जाये? इसलिए -

गुरु, तारो पार न पायो, हे, न पायो,

प्रथमीना मालिक, तमे रे तारो तो अमे तरीअे ...

चंद्रमाँ में काला दाग क्या है? 'रामचरित मानस' में उसका एक पूरा प्रकरण है। हनुमानजी को जब पूछा गया कि चांद में काला दाग क्या? तो हनुमानजी ने कहा, ''महाराज, माफ़ करिएगा, चंद्रमा आपका दास है। और आप कहते हैं, दिल में मैं मेरे भक्तों को रखता हूं। इसलिए चंद्रमाँ में काला दाग है ये कोई नहीं, मेरा राम है।''

और साहब, बीज बोना है तो भीगी ऋतु चाहिए। वैशाख के ताप में आप बीज बोओ तो उगे ना। इसलिए गुरुपूर्णिमा वर्षाऋतु में आती है, क्योंकि गुरु को कोई न कोई सूत्र देना है, साधक की भूमि में बीज बोना है। गुरु और शिष्य जब धीरे-धीरे सूत्र के बारे में एक हो जाय तब कोई एक महासूत्र की बिजली कोंध जाती है और इसी बिजली में हमारी गंगासती कहती है, मोती पिरो लो। गोस्वामीजी गुरुवंदना, फिर हनुमानजी की वंदना करते हैं -

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।

सकल अमंगल मूल-निकंदन।।

बंदौ राम-लखन-बैदेही।

जे तुलसी के परम सनेही।।

'बालकांड' के इस वंदना-प्रकरण में क्रम में गुरु से वंदना का आरंभ किया और परमगुरु हनुमानजी तक ये वंदना का सिलसिला चलता है। तो, श्री हनुमानजी की वंदना की गई है। हनुमानजी महाऔषध है; अद्भुत है।

हनुमानजी महावीर है; हनुमानजी महादेव है। भगवान शिव अजन्मा और अविनाशी है। फिर भी उनके रुद्रों के अवतार में ग्यारहवें रुद्र ये हनुमानजी के रूप में आये हैं, इसलिए वो महादेव है। हनुमानजी महायोगी है। हनुमानजी महाज्ञानी है। हनुमानजी महादानी है; हनुमानजी जैसा कोई दाता नहीं। हनुमानजी महाभोगी है; आपको आश्चर्य होगा, महाभोगी! यहां भोगी का संदर्भ बदल जाता है। संसार में जितने दास हुए हैं, दास्यभक्ति के जितने महापुरुष हुए हैं, उनमें श्री हनुमानजी महादास है। उनके समान कोई दास नही। श्री हनुमानजी महाराज महादूत है। श्री हनुमानजी महात्यागी है; उनके समान कोई त्यागी नहीं। और श्री हनुमानजी महावैरागी है।

मानस-हनुमानचालीसा

॥ २ ॥

'हनुमानचालीसा' बहुत रहस्यपूर्ण है

कल व्यासपीठ कह रही थी कि वेद का भाष्य उपनिषद, उपनिषद से 'भगवद् गीता', 'भगवद् गीता' से रामकथा, फिर 'सुन्दरकांड', फिर 'हनुमानचालीसा।' ये आखिरी पंक्ति है 'हनुमानचालीसा' की; आप जानते हैं उसके बाद दोहा, उसके बाद 'हनुमानचालीसा' का समापन किया जाता है, 'जो यह पढै हनुमानचालीसा।' गोस्वामीजी कहते हैं, जो यह 'हनुमानचालीसा' पढेंगे, उसका पठन करेंगे तो भगवान शंकर की साक्षी है कि वो सिद्ध होगा। अथवा तो 'हनुमानचालीसा' के अनुष्ठान से सिद्धि प्राप्त होती है। और गोस्वामीजी सदा अपने आप को हरि का चेरा मानते हैं। हरि मानी विष्णु, नारायण, राम, व्यापक ये हरि अथवा हरि का एक अर्थ बंदर भी होता है। हरि मानी पशु भी। तो, गोस्वामीजी कहते हैं, मैं सदा-सदा अस्तित्व का चेरा हूं, व्यापक का चेरा हूं। चेरा मानी दास हूं; राम का दास हूं, या हनुमानजी का दास हूं; इसलिए हे नाथ, मेरे हृदय में, मुझे अनुभव हो ऐसे निवास करे।

मेरी समझ में एक निजी बात आपको बताते हुए आगे बढ़ूं। मेरे दादाजी, जिनसे मैंने 'रामचरित' का प्रसाद प्राप्त किया है, उसने सबसे पहले मुझे 'रुद्राष्टक' सिखाया था और स्नान करते समय 'रुद्राष्टक' का निरंतर पाठ करने का एक स्नेह के साथ आग्रह था। मेरे दिमाग में ये बात रखी गई थी कि ये देह ही शिव है। और आप जब स्नान करो तब शरीर को स्नान नहीं करवा रहे हैं, शिव को अभिषेक कर रहे हैं, इसी भाव से 'रुद्राष्टक' का पाठ करीए। दूसरी बात ये भी थी कि साक्षात् 'हनुमानचालीसा' के अनुष्ठान के बारे में भी अकसर बताया गया था। गुरुकृपा से मेरी ऐसी जानकारी है कि 'हनुमानचालीसा' रहस्यपूर्ण है। वो चालीस पंक्तियों का एक स्तोत्र ही लीजिए। लेकिन इतना ही नहीं है; उसमें बहुत रहस्य छिपा हुआ है।

चारो जुग परताप तुम्हारा। है परसिद्ध जगत उजियारा।।

साधु संत के तुम रखवारे। असुर निकंदन राम दुलारे।।

अष्ट सिद्धि नौ निधि के दाता। अस बर दीन्ह जानकी माता।।

सीधा-सादा अर्थ है कि चारों युग में आपका प्रताप छाया हुआ है। यानी चारों युग पर आपका एक विशेष प्रभाव हो

रहा है। कई व्यक्तित्व ऐसे आते हैं, पूरे युग पर वो छा जाते हैं। श्री हनुमानजी के बारे में कहा गया कि चारों युग में आपका प्रभाव है। जैसे सूरज के प्रभाव से ये पूरा ग्रहमंडल, पूरी दुनिया चलती है। हमारा सौरमंडल सूरज है उसके प्रभाव से ये सब चलता है, वैसे चारों युग में आपका प्रभाव काम कर रहा है।

चारयुग - सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग। सतयुग में हनुमानजी का प्रभाव रहा शिवरूप में, महादेव के रूप में। सतयुग को हम आदि युग कहते हैं; ये प्रथम युग है। शंकर आदि-अनादि है, अजन्मा है। हनुमानजी चरित्र के रूप में तो हमें त्रेतायुग में मिलते हैं। त्रेतायुग में भी, रामकाल में भी श्री हनुमानजी का दर्शन तो हमें 'रामचरित मानस' के आधार पर 'किष्किन्धाकांड' में होता है। प्रत्यक्ष दर्शन तो 'किष्किन्धा' में होता है। फिर सतयुग में हनुमानजी शिवरूप में पूरे सतयुग को प्रभावित करते हैं। त्रेता में हमारे श्रद्धा के अनुकूल अथवा जो शास्त्रों में वर्णित है, वो जो विग्रह है हनुमानजी का रूप, वो त्रेता में हमें मिला और त्रेता में हनुमंतरूप में आपका प्रभाव रहा। राम आये, गये भी; हनुमान आये, कभी गये नहीं। शास्त्रकार कहते हैं, ये बंदर नहीं थे, एक जाति है, जो हो।

एक उद्योगपति मुझे कहा करते थे, 'बापू, आपकी बात दुनिया मानेगी, इसलिए हनुमानजी की पूंछ निकलवा दीजिए।' ये पूंछ अच्छी नहीं लगती, ऐसी आपकी मान्यता थी। मैंने कहा, मुझे पूंछवाला हनुमान अच्छा लगता है, मूछवाला नहीं। दुनिया जिसको पूछती हो वो पूंछवाला है। जगत जिसको पूछे, जिसकी राय ले, जिसको मार्गदर्शक बनाये। राम के साथ जब हनुमानजी का वार्तालाप होता है तब भगवान स्तंभित हो गये थे हनुमानजी की वाक्चातुरी सुनकर। बोलते थे, लेकिन गा रहे हैं हनुमान, ऐसा लगता था! और राम प्रभावित हो जाय! लक्ष्मणजी से रामजी कहते हैं, 'ऐसा ब्रह्मचारी पहलीबार देखता हूं जिसकी वाक्यरचना में एक भी शब्द इधर-उधर नहीं हो रहा है! क्या वाक्वैभव है उस आदमी

का! उसे बोलने दो। वो बोलता है तो मुझे जानकी के वियोग की पीड़ा कम हो जाती है।' ये राम का वक्तव्य है। उसकी बोली दो दिलों को इकठ्ठा कर देती है। 'ऐसी कथा कौन सुना रहे हैं? तू प्रकट हो जा।' ऐसा माँ जानकी ने निमंत्रण दिया है। ये पूछने योग्य घराना है। चाहिए भरोसा, चाहिए गुणातीत श्रद्धा। जिसस ने कहा, दस्तक दो, दरवाजा खुलेगा।' मैं विश्वास के साथ कहता हूं, इस ठिकाने पे सर झुकाओ, दरवाजा खुलेगा। चाहिए भरोसा। स्वर्गीय हरिभाई कोठारी का निवेदन है, आपने कहा था, जहां राममंदिर होगा वहां हनुमान होगा ही; जरूरी है हनुमान। लेकिन जहां हनुमानजी का मंदिर हो, वहां राम हो ना हो, जरूरी नहीं है। 'हनुमानचालीसा' में आप पढ़ते हैं -

राम दुआरे तुम रखवारे।

वहां हनुमानजी होते ही हैं। हनुमान अंदर बैठा उसका भी रक्षक है और जो शरण में आता है उसका भी रक्षक है। किसने की थी लक्ष्मण की रक्षा? तो, हनुमंततत्त्व पूछनेयोग्य घराना है। बताईये, आज तक हनुमानजी का कोई आश्रम नहीं। ये हवा है, पूरे विश्व में घूमती रहती है। ये सुगंध है, शीतल है, हनुमंततत्त्व के रूप में। 'रामचरित मानस' के पंचप्राण के हनुमानजी महाराज रक्षक है। हनुमानजी ने पांच प्राण बचाये, हनुमानजी को पाने के लिए कहीं भी जाने की जरूरत नहीं है। हनुमानजी कहां नहीं है वायु के रूप में? हमारे भीतर भी है। हनुमानजी साधु है।

होय ना साधुना सरनामां.
पीछो कर्ये न पामो, सेवो तो मळवाना सामा.

- प्रणव पंड्या

तो, आदिकाल में वो शिव के रूप में सतजुग को प्रभावित करते थे। तंत्र में भी हनुमानजी की बहुत साधना होती है। थोड़ा कठिन है। इसमें आप मत जाईए, लेकिन हनुमंत-उपासना करते-करते ठाकुर परमहंस की पीठ के पास एक या डेढ़ इंच का पूंछ निकलने लगा था, ये सत्य है। ये कठिन है। कितने-कितने हनुमानजी के रूप हमको मिले हैं! कभी लंकादहन करते हुए, कभी पहाड़ लाते हुए, कभी वीरासन में, कभी विकटरूप, कभी भीमरूप। तो, त्रेतायुग में हनुमानजी कपीन्द्र के रूप में रहे। फिर द्वापर, द्वापर में श्री हनुमानजी महाराज मध्येमहाभारत, महाभारत के युद्ध के मैदान में अर्जुन की धजा में बिराजमान है। वहां श्री हनुमानजी दिखते हैं। चार वस्तु जिसके पास हो तो कीर्ति, विजय, श्री सबकुछ मिल जाता है; केवल चार चाहिए। 'श्रीमद् भगवद्गीता' में अर्जुन के पास रथ था; दुर्योधन के पास भी होगा, लेकिन जितना अर्जुन के रथ का वर्णन है, दुर्योधन के रथ का वर्णन नहीं है। अर्जुन के रथ के सारथि का नाम श्रीकृष्ण है। श्वेत घोडें हैं। जिसके जीवन के रथ के वाहक-चलानेवाले श्वेत उज्वल घोड़ें हो, जिसके रथ के सारथि भगवान श्रीकृष्ण हो और जिसकी धजा में हनुमान बैठे हो उसके विजय के लिए कभी कोई चिंता हो ही नहीं सकती।

'लंकाकांड' में धर्मरथ का वर्णन आप जानते हैं; जिसके पास धर्म का रथ हो। तुलसी ने कोई धर्म का नाम नहीं दिया, केवल धर्मरथ। मेरी समझ में जिसके जीवन में सत्य धरम हो, प्रेम परम हो और करुणा करम हो, बस! मूल में हम सनातनी है; कोई बहका दे, तो चुकना मत। कई शाखाएं वटवृक्ष को नुकसान करती है! कभी-कभी आदमी इतना उपर उठ जाता है कि उसको मिट्टी तक की खुश्बू नहीं आती।

जिस बुलंदी से इन्सान छोटा लगे,
उस बुलंदी पर जाना नहीं चाहिए।

लेकिन ये दर्शन भ्रामक है; नुकसान तो उपरवाले को है। पूछो नीचेवालों को; उसको भी ये छोटा लगता है।

बहुत बड़ा वृक्ष हो, इसमें एक पत्ता पिला हो जाय उसमें समग्र वृक्ष जिम्मेवार होता है। और एक नई कोंपल निकले तो भी पूरा वृक्ष अधिकारी है। याद रखना, एक व्यक्ति गलत अभिप्राय देता है तो पूरे वटवृक्ष को मुश्किल पड़ती है। हममें कोई बुरा पत्ता, बुरी चीज निकले तो हमारा मन भी जिम्मेवार है, बुद्धि भी जिम्मेवार है। और बुद्धि कहे नहीं, तो चित्त डामाडौल होगा। या तो हमारा अहंकार कहता है, हमें ये करने दो, पूरा अस्तित्व काम में लगता है। तुम्हारे में कोई अच्छा सूत्र निकल आये, अच्छी बात आये तो समझना, तुम्हारा मन, तुम्हारी बुद्धि, तुम्हारा चित्त, तुम्हारा अहंकार सब संयुक्त है, उसमें जुड़ा हुआ है। हमें पता नहीं ऐसी आंतरिक क्रिया होती है। हर्ष ब्रह्मभट्टसाहब के शे'र है -

लिपटता हूं में जब उससे, जुदा कुछ और होता है।
मनाता हूं मैं जब उसको, खफ़ा कुछ और होता है।
न कुछ मतलब अज़ानों से, न पाबंदी नमाज़ों की,
मुहब्बत करनेवालों का खुदा कुछ ओर होता है।

तो, मेरे भाई-बहन, सनातन धर्म है उसका गौरव जरूर करो, लेकिन विशेषणमुक्त, क्योंकि ये सत्य की उद्घोषणा है, 'सत्यं परं धीमहि।' सनातन धर्म की उद्घोषणा है, 'श्रीमद् भागवतजी' की।

'धरम न दूसर सत्य समाना।' कौन धरम? तो, कहो सत्य; कौन परम? तो कहो प्रेम; कौन करम? तो कहो करुणा। तो, जिसके पास सत्यरूपी धर्मरथ है; जिस रथ के घोड़ें श्वेत है; घोड़ें मानी इन्द्रियां। जिसकी प्रत्येक इन्द्रियां उज्वल हो। आंख अच्छा देखे। जहां तक हमारा होश है, श्वेत रहे, दाग मुक्त रहे। और सारथि श्रीकृष्ण हो। आज हम कहां से कृष्ण लायें? तो तुलसी ने हमारा सारथि नियुक्त किया और उसका नाम लिखा 'रामचरित मानस' में भजन।

ईस भजनु सारथी सुजाना।
बिरति चर्म संतोष कृपाना।।

तो, द्वापर में अर्जुन के रथ का सारथि कृष्ण है, कलियुग में हम जैसों के सारथि ईश्वर का भजन है। और सर्वोपरि हनुमान है, कपिध्वज है। तो, द्वापर में श्रीहनुमानजी का प्रभाव अर्जुन की धजा में बिराजित होकर है। और कलियुग में कोई रामकथा का श्रेष्ठ श्रोता है, रामरसायण का भोगी है; ये रसिक है, रामनाम और रामकथा का इतना भोगी विश्व में कोई नहीं है। 'भोग' शब्द खराब नहीं है, हम लोगों ने गंदा कर दिया है, मर्यादा तोड़कर! शंकराचार्य भगवान का निवेदन है, उसने कहा, 'पूजाते विषयोपभोगरचना।' संसार के विषयभोग मेरी पूजा है। बड़ा रेशनालिस्ट निवेदन है ये! बत्तीस साल की उम्र में ये शंकर का अवतार ही कर सकता है। नववीं साल में संपूर्ण वेद-वेदान्त हृदय में बस चूका था! भाष्य होने लगे थे! क्या अद्भुत वाङ्मय वो कहते हैं! मन प्रसन्न करना है तो उधार उपकरण कम करो। मैं इसको मिलूं तो खुशी हो, ये सोचना बंद करो। हम आनंद के पुंज है। हमारा मन प्रसन्न रहे ये हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। दूसरों के लिए अभिप्राय देना बंद करो। मन प्रसन्न रखने के लिए बाहर के उपकरण छूटे। और मन जब प्रसन्न हो जाएगा ऐसे तो शंकराचार्य कहते हैं, तुझे परमात्मा के दर्शन हो जायेंगे और परमात्मा के दर्शन होते ही संसार न के बराबर हो जाएगा। तो, कलियुग में भगवत्कथा के श्रोता के रूप में, हरिनाम के जापक के रूप में श्रीहनुमानजी सब पर प्रकाश डालते हैं।

तो, चारों जुग हनुमंत से प्रभावित है। सतयुग में शिवरूप में हनुमानजी ने पूरे युग को ध्यान से प्रभावित किया। सतयुग ध्यान का युग माना गया है आध्यात्मिक संदर्भ में। उनका अक्रिय ध्यान था। सतजुग में अक्रिय है हनुमानजी; त्रेतायुग में सक्रिय है। सक्रियता से श्रीहनुमानजी ने त्रेतायुग को प्रभावित किया। द्वापर में अर्जुन की धजा में रहकर एक मूकसेवा, मूकपूजा से द्वापर को हनुमानजी ने प्रभावित किया। कलियुग में रामनाम का संकीर्तन और रामकथा का संकीर्तन करके कलियुग को प्रभावित किया। कुल मिलाकर चालीस क्षेत्रों को हनुमानजी ने प्रभावित किया। चालीस क्षेत्र में सबकुछ आ गया, इसलिए 'हनुमानचालीसा' है। जहां तक मेरी समझ है, 'हनुमानचालीसा' ये चालीसा-जगत में आदि है, इससे पहले कोई चालीसा का सर्जन नहीं है। करीब-करीब पांच सौ साल पुरानी है।

युग का अर्थ दो होता है, युग मानी दो। दस ऐसे चतुष्कोण है जो कुल मिलाकर चालीस होते हैं। तो, 'हनुमानचालीसा' का भाष्य ये दस चतुष्कोण है। तो, एक तो युग, उस पर हनुमानजी का प्रभाव; दूसरा चतुर्वर्ण। चारों वर्ण पर हनुमंतप्रभाव है। ध्यान रखना, वर्णभेद की दृष्टि में मैं नहीं बोल रहा हूं। व्यवस्था गुणधर्म के आधार पर एक समय में रही। हनुमानजी अपने हनुमंत चरित्र में अपनी सक्रियता में कई बार ब्राह्मण का रूप लेते हैं, इसलिए ब्राह्मण अथवा ब्राह्मणत्व पर हनुमानजी का प्रभाव है। 'हनुमानचालीसा' में यज्ञोपवित धारण की है। 'कांधे मूंज जनेउ साजै।' हनुमान क्षत्रिय पर भी प्रभाव डाल रहे हैं; उसका युद्धकौशल्य, निर्बल की रक्षा; गिरे हुए को उपर उठाना जो क्षत्रिय का धर्म है वो हनुमानजी ने निभाया। हनुमानजी वैश्य है। वैश्य लेन-देन करता है। भगवान पर इतना करजा हनुमानजी ने चढ़ाया कि आज तक मेरा राम हनुमानजी के करजे से मुक्त नहीं हो पाया। परमात्मा को सदा-सदा ऋणी रखा। निरंतर प्रभु को करजे में रखा। और सेवा करना, किंकरी करना, छोटा-सा छोटा काम करना प्रभु का, दास्यभक्ति के आचार्य, इसलिए जो सेवाक्षेत्र में माने गये, श्री हनुमानजी वो भी है। तो, चारों वर्ण भी आप से प्रभावित है।

तीसरा चतुर्थ, भगवान जब अवतार लेते हैं, चार वस्तु उसके साथ जुड़ी रहती है - नाम, रूप, धाम और लीला। रामकाल में आप हनुमानजी को देखे तो इन चारों पर उसका प्रताप है। भगवान के नाम की महिमा विश्व में किसीने इतनी उजागर की है तो एक प्रकार के कीर्तनाचार्य नृत्य करते उछल-कूद करते श्री हनुमानजी महाराज ने हरिनाम पर अपना प्रभाव, अपना प्रताप विश्व में उजागर किया। नामउपासक है हनुमानजी। परमात्मा के रूप की जहां भी चर्चा हुई, जैसे मंदिर में एक विग्रह किया जाय तो हनुमानजी को रखना पड़ेगा। रूप भी उससे प्रभावित है। 'होत न आज्ञा बिनु पैसारे।' लीला; कहीं भी प्रभु की लीला का वर्णन करो, खास करके राम की कथा जब कहनी हो, तब तो बोलना ही पड़ता है, 'आईए हनुमंत बिराजिये।' और धाम, श्री हनुमानजी कहते हैं, मैं अयोध्योधाम छोडूंगा नहीं, जब तक रामकथा चलती रहेगी। रामराज्य के बाद हनुमानजी निरंतर धाम में विराजमान रहे श्री अयोध्या में। तो, परमात्मा की सगुणलीला के जो चार भाग है उस पर भी हनुमानजी का प्रभाव वैष्णवों को दिखता है।

चतुर्थ साथिया; भगवान का अवतार होता है तब उनके चार हेतु होते हैं, जो तुलसीदास द्वारा वर्णित है।

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार।।

परमात्मा के अवतार के लिए 'मानस' में चार हेतु का उल्लेख किया है। विप्र, धेनु, सुर, संत-चार के लिए प्रभु आये। साकेतवासी प्रभु रामकिंकर महाराज ने ये चार का अर्थ ये भी किया कि भगवान ब्राह्मण के लिए आये, धर्म के लिए आये; धेनु के लिए आये, अर्थ के लिए आये; सुर-देवताओं के लिए आये, काम के लिए आये; और संत के लिए आये, मोक्ष के लिए आये। इन चारों वस्तु पर हनुमंतप्रभाव है। पूरा ब्राह्मणत्व उनसे प्रभावित

है; उनके संयम से। हनुमानजी मूलत: पशुजाति में है। धेनु भी पशु है। समग्र पशु जाति पर हनुमानजी का प्रभाव है। पूरा देवगण हनुमान से प्रभावित है! महादेव के रूप में भी हनुमानजी से प्रभावित है। और संत; 'साधु-संत के तुम रखवारे।'

तो, चार युग; चार वर्ण; चार परमात्मा के विग्रह में नाम, रूप, लीला, धाम और चार परमात्मा के अवतार हेतु जो विप्र, धेनु, सुर, संत। और चार वेद। कई महानुभावों ने अपने-अपने आग्रहवश वेदों में भी अपनी-अपनी मान्यता सिद्ध करने की सफल-असफल चेष्टायें जरूर की है! कोई गलत मेसेज न ले, मैं शंकराचार्य भगवान का निवेदन करूं। शंकराचार्य भगवान कहते हैं, आपका चित्त ब्रह्माकार हो जाय, आपको ब्रह्म का साक्षात्कार हो जाय, तो भी तीन वस्तु को कभी छोड़ियेगा मत। उसमें पहला नाम बताया, उपनिषद को कभी छोड़ना मत। दूसरा, गुरु का अनादर मत करना और तुम खुद ईश्वर बन गये तो भी ईश्वर की सत्ता का अनादर कभी न करना। तो, वेद की महिमा है अवश्य। चारों वेद पर हनुमानजी का प्रभाव है। हनुमानजी वेदज्ञ है, वेदपरायण है, व्याकरणाचार्य है, सांख्य पर भी उसका उतना ही अधिकार है। ज्योतिष पर भी प्रभाव है। वेद परमात्मा का श्वास है और श्वास में पवन है, वायु है और ये वायु है इसलिए वेद को भी प्रभावित किये हनुमंततत्त्व है। तो, ये पांचवां साथिया।

छठ्ठा साथिया, चारों आयुध पर हनुमानजी का प्रभुत्व है; शंख, चक्र, गदा और पद्म। शंख पर हनुमानजी का प्रभाव है; उसके पूर्वरूप शंकररूप में उसकी ग्रीवा शंख बताई; शंकररूप में विषपान शंख द्वारा हुआ है। समंदर से जो विष निकला वो शंख में डाला गया और शंख के द्वारा विषपान किया गया। हनुमान के कंठ से जो आवाज़ आती है वो शंखध्वनि है। चक्र; ज्योतिषविद्या में ऐसा कहा जाता है जिसके पैर में चक्र होता है वो घूमते रहते हैं। पूरे जगत में हनुमानजी वायु के रूप में घूमते रहते हैं, इसलिए चक्र पर भी उसका प्रभुत्व है। गदा तो उसमें रखवाते है; और पद्म, पद्म का अर्थ है कमल; हनुमानजी का समग्र जीवन असंग है कमल की तरह।

सातवां साथिया, यद्यपि इन दस साथियों का क्रम भी है। यहां क्रम नहीं है। आंख, नाक, कान, त्वचा ये सब बहिर्करण है और एक अंत:करण होता है; जो चार वस्तु अंदर की इन्द्रियां, जिसको वेदांत में अंत:चतुष्टय कहते हैं और वो है आंतरिक चार इन्द्रियां- मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार। प्रत्येक व्यक्तियों की ये भीतरी इन्द्रियों हनुमानजी से प्रभावित है। पवन की तरह मन बिलकुल डामाडौल रहता है; हनुमंत असर है।

मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।

बुद्धिप्रतिभा उसके समान किसीकी नहीं। हमारी मति उससे प्रभावित है। चित्त का बहुत प्यारा स्थान है; जब एक ही तत्त्व का चिंतन चलता है तब बुद्धि और मन एक ओर आराम करते हैं और केवल चित ही काम करता है। साधनापद्धति में ऐसा माना गया है। हनुमानजी चित्त को प्रभावित कर सकते हैं। और अहंकार; इतना दुर्गम और दुर्लभ काम करनेवाले महापुरुष पर अहंकार नहीं प्रभाव डाल पाया। अहंकार पर हनुमान का स्वयं प्रभाव रहा। इसलिए भीतरी चार इन्द्रियां, उस पर भी श्री हनुमानजी का प्रभाव साधनापद्धति में बताया गया है।

आठवां साथिया, आठवां चतुष्कोण धर्म के लक्षण सत्य, शौच, दया अथवा दान और तप। शास्त्रों ने कहा, जो शंकर के सामने नंदी बैठता है वो धर्मस्वरूप है; चतुष्पाद धर्म। सत्य, सतजुग पर उसका प्रभाव है। तप, हनुमानजी जैसा तपस्वी कौन मिलेगा? ये बड़े तपस्वी है। निरंतर फलाहारी महापुरुष है; शाखा पर रहनेवाला है। तो, हनुमंततत्त्व तप पर प्रभावी है।

पवित्रता; बहिर् शुद्धि और भीतरी पवित्रता उस पर हनुमानजी का प्रभाव बहुत काम करता है। दया अथवा तो दान, दया करनेवाले, दान करनेवाले में हनुमान शिरोमणि है शंकर के रूप में। तो, धर्म जब चतुष्पाद है तब उस पर भी मेरी व्यासपीठ को हनुमानजी का प्रभाव दिखता है।

नववां साथिया, जिसको चार चरण होते हैं ऐसी चौपाई पर हनुमानजी का प्रभाव है। प्रत्येक चौपाई, चार चरण। चार चरण पूरे उसको एक चौपाई कहे। कविता का एक नियम है, चार चरणवाली चौपाई। मेरी व्यक्तिगत मान्यता है, प्रत्येक चौपाई मंत्र है। बड़े से बड़े मंत्र काम न करे वैसा काम चौपाई कर सके, क्योंकि उस पर हनुमंतप्रभाव है। एक भी चौपाई ऐसी नहीं, जिस पर हनुमंतजी का प्रभाव ना हो। और दसवां साथिया; नीतिकारों ने माना है कि दुनिया में चार प्रकार के हठ होते हैं - राजहठ, बालहठ, अश्वहठ, स्त्रीहठ। राजहठ, सुमंत जैसा कोई मंत्री हो तो कुछ सरल कर सकता है। बालहठ, बच्चों का हठ, जिद्द करे तो फिर छोड़े ना; रखना पड़ेगा। राजा का हठ निभाना पड़ता है। बालक का हठ निभाना पड़ता है। फिर अश्वहठ; अश्व जो जिद्द करे! लेकिन उसको भी अच्छा महावत काबू में ले सके। चौथा स्त्रीहठ; श्री हनुमानजी महाराज का आश्रय करोगे तो चारों हठ पर तुम्हारा प्रताप सिद्ध होगा। इन सब पर 'रामचरित मानस' में हनुमानजी का प्रभाव दिखाया।

कल हनुमानजी की वंदना की। उसके बाद सुग्रीव, विभीषण आदि सबकी वंदना और सीतारामजी की वंदना की गई। उसके बाद नव दोहे में बहत्तर पंक्तियों में गोस्वामीजी ने छत्तीस चौपाईयों में रामनाम की महिमा का गायन किया। आप रामनाम न ले सको और 'हनुमानचालीसा' का पाठ करो तो भी वह रामनाम होगा। कलियुग में प्रभु के नाम की बड़ी महिमा है। राम का नाम मतलब कोई भी नाम लो; नाम का आश्रय करो। आपको जो नाम में रुचि हो, हरिनाम का आश्रय करो। 'मानस'कार कहते हैं, मेरा एक मात्र भरोसा रामनाम में है। तो बाप, तुलसी कहते हैं, मेरा भरोसा तो केवल एक रामनाम में है। कलियुग में केवल नाम आधार है। नाम में सबकुछ रखा है। 'दोहावली रामायण' का एक दोहा -

जथा भूमि सब बीजमय नखत निवास अकास।
राम नाम सब धरममय जानत तुलसीदास।

जैसे पृथ्वी समस्त बीजमय है। कौन बोने गया पहाड़ पर बीज? लेकिन वर्षा होती है, पहाड़ भी हरियाले हो जाते हैं! कौन सितारों को प्रकटाने गया है? आकाश नक्षत्रमय है, वैसे रामनाम सब धर्ममय है। कैसे भी नाम का उच्चारण और समय मिले स्मरण करो। रामनाम और गंगा का जल तुलसी के जीवन का आधार माना गया है।

एक उद्योगपति मुझे कहा करते थे, 'बापू, आपकी बात दुनिया मानेगी, इसलिए हनुमानजी की पूंछ निकलवा दीजिए।' मैंने कहा, मुझे पूंछवाला हनुमान अच्छा लगता है, मूछवाला नहीं। दुनिया जिसको पूछती हो वो पूंछवाला है। जगत जिसको पूछे, जिसकी राय ले, जिसको मार्गदर्शक बनाये। राम के साथ जब हनुमानजी का वार्तालाप होता है तब भगवान स्तंभित हो गये थे हनुमानजी की वाक्चातुरी सुनकर। उसकी बोली दो दिलों को इकठ्ठा कर देती है। 'ऐसी कथा कौन सुना रहे हैं? तू प्रकट हो जा।' ऐसा माँ जानकी ने निमंत्रण दिया है। ये पूछने योग्य घराना है। चाहिए भरोसा, चाहिए गुणातीत श्रद्धा।

मानस-हनुमानचालीसा

।। ३ ।।

'रामायण' और 'महाभारत' महाकाव्य भी है और महामंत्र भी है

मुझे किसीने एक जगह पूछा था, 'आप तो कहते हैं कि मैं व्यास की गोद में हूं और आप की गोद में आप 'रामायण' की पोथी रखते हैं।' तो, मैंने कहा, बिलकुल, जिसको बच्चा नहीं होता वो किसीको गोद लेता है तो, ये तो शंकर ने दी हुई वस्तु मैंने गोद ली है। उसमें मेरा क्या? मैं एक निमित्त हूं। कभी ये रामकथा शंकर ने कागभुशुंडिजी को गोद दी थी, कभी याज्ञवल्क्य को दी थी, वो ही कथा नरहरि महाराज को दी थी, वो ही कथा तुलसी के पास आई; मेरे दादा के पास आई और उसके बाद मेरे पास आई। तो, प्रश्न ये उठता है कि 'रामायण' की गोद में कौन? 'रामायण' की गोद में राम है। तो, प्रश्न उठेगा राम की गोद में कौन? 'ब्रह्मांड निकाया निर्मित माया', समस्त ब्रह्मांड है उसकी गोद में। ब्रह्मांड की गोद में कौन? तो, हमारा सौरमंडल। सौरमंडल में कौन? कई ग्रह, उनमें पृथ्वी। पृथ्वी की गोद में हिन्दुस्तान! हिन्दुस्तान की गोद में व्यासपीठ! व्यासपीठ की गोद में मोरारिबापू! मोरारिबापू की गोद में 'रामायण।' घुम-घुमकर ये पूरा सर्कल है।

मंगल भवन अमंगल हारी।
द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।

श्री हनुमानजी महाराज का प्रताप चारों युग पर है। आज हनुमानजी को सामने रखते हुए आप के सामने ऋग्वेद का एक पाठ करना चाहता हूं। ये वेदमंत्र है। वेद में इन्द्र ये परमात्मावाचक संबोधन है। वेद में इन्द्र मानी परमात्मा-ईश्वर। वेद का ऋषि भगवान की प्रार्थना करते हैं और याचना करते हैं। वेद के ऋषि ने जो मांगा है ये कौन नहीं चाहता? हम सब इस मंत्र का साथ में उच्चारण करें -

इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य सुभगत्वमस्मे।
पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां स्वाद्मानं वाचः सुदिनत्वमह्नाम्।।

'इन्द्र श्रेष्ठानि'; ऋषि मांगता है, परमात्मा, हमें श्रेष्ठ से श्रेष्ठ धन प्रदान करो। 'द्रविणानि धेहि चित्तिं दक्षस्य'; ऋषि मांगता है, हमें स्वस्थ व्यक्ति जैसा चिंतन प्रदान करो। ऋषि परमात्मा को इन्द्र संबोधन करके मांगता है कि हे परमात्मा, हमें श्रेष्ठ द्रव्य दो; उत्तम अर्थ, अर्थ मानी धन। ऋषि ने धन का निरादर नहीं किया। उसको धन, अर्थ चाहिए

लेकिन एक शर्त के साथ प्रार्थना की है, परमात्मा, मुझे श्रेष्ठ द्रव्य दो। बहुत मेहनत से प्राप्त हो, लेकिन सत्कर्म में उसका उपयोग करो तो तुम्हारे पास द्रव्य है। वेद कहता है, दो हाथों से कमाओ; और हनुमानजी पैसे के विरोधी नहीं है। द्रव्य और लक्ष्मी के विरोधी होते तो अपना शरीर सोने का क्यों रखते? जगतभर का द्रव्य स्वर्ण पर तो निश्चित होता है। हनुमानजी स्वर्णदेह है।

कंचन बरन बिराज सुबेसा ।
कानन कुंडल कुंचित केसा ।।

तो, बहुत मेहनत से कमाया जाय और शुभ में शुभ काम में दिया जाय वो द्रव्य है। तो, आपने कथा योजित की है इसलिए मैं सराहना नहीं करता, लेकिन ये विश्व पर बहुत बड़ा उपकार है। ये मेरे वचन नहीं है; भगवान शंकर के वचन है पार्वती के प्रति कि देवी, आपने मेरे से भगवान की कथा की जिज्ञासा करके पूरे जगत पर उपकार किया है -

धन्य धन्य गिरिराजकुमारी ।
तुम्ह समान नहिं कोउ उपकारी ।।
पूँछेहु रघुपति कथा प्रसंगा ।
सकल लोक जग पावनि गंगा ।।

भगवान की कथा में जिस समाज को, जिस व्यक्ति को, जिस परिवार को निमित्त बनाता है, वो जगत पर उपकार करता है। तो, बहुत मेहनत से कमाया जाय और बहुत सरलता से उसको बहाया जाय वो द्रव्य है। लेकिन बहुत सरलता से ऐसे सत्कर्म में जब प्रवाहित करने में पसीना छूट जाय लेकिन पैसा ना छूटे! ये लक्ष्मी पैसा है।

कबीर का कोई संप्रदाय नहीं। जिन्होंने कबीर को कबूल किया वो आदमी धन्य है। कबीर मानी विशालता का समुद्र है कबीर।

कबीरा कुआं एक है, पनिहारी अनेक।
बरतन सब न्यारे भएं, पानी सब में एक।

गुजराती साहित्य के समर्थ साहित्यकार भगवतीकुमार शर्मा, आपने कविता लिखी; आपने लिखा कि शब्दों के साथ मैंने बहुत काम लिया, लेकिन बूढ़ापे के किनारे पर बैठा हूं तब लगता है कि ढ़ाई अक्षर छूट गया! एक ढ़ाई अक्षर प्रेम का। जो कबीर ने कहा था कि 'ढ़ाई अक्षर प्रेम का पढ़े सो पंडित होई।' क्यों राम की कथा? क्यों? क्यों आज गाउ- गाउ राम मंदिर है? राम ने ये काम किया है; छोटे से छोटे आदमी तक राम पहूंचे थे। माँ बात करती हो ऐसे राम भीलों के साथ, वह कोल-किरात साथ बात करते हैं।

रूखड़ बावा तुं हळवो हळवो हाल जो,
गरवा ने माथे रे रूखडियो झळुंबियो...

वह रूखड़ बावा, जिसने बारह साल तपस्या की। उसने जो लिखा है; लेकिन हरीन्द्रभाई दवे तो कहते हैं, वह रूखड़ का लिखा हुआ नहीं है। रूखड़ की बारह साल की तपस्या के बाद कोई गुमनाम कवि ने लिखा है। उसने उसके साधना के पड़ाव देखे हैं। आज भी जूनागढ़ में गिरनार की तळेटी में बावा की मढ़ी है वहां रूखड़ नामक वृक्ष है। लोग आज भी वहां आकर श्रद्धा से अपना सर झुकाते हैं। रूखड़ का एक अर्थ वृक्ष भी होता है और तुलसीदास कहते हैं कि रूखड़ जैसा कोई संत नहीं। ऐसी चेतनाएं गुमनाम प्रदेश की नीपज होती है। श्रावण मास जैसा कोई मास नहीं और गुरुपूर्णिमा जैसी कोई पूर्णिमा नहीं। आषाढ़ी पूर्णिमा का महत्त्व क्यों है? वैज्ञानिक निष्कर्ष मुझे बताया गया कि उस दिन आषाढ़ी पूर्णिमा का चांद पृथ्वी के निकट आता है। गुरु तो वो है कि जो धरती पर है उसके निकट आए; इसलिए वैज्ञानिक लोग गुरुपूर्णिमा को सूपरमून कहते हैं। उसमें ज्यादा उजाला होता है।

जेम झळुंबे धरती उपर मेघ जो,
एवा गरवा ने माथे रे रूखडियो झळुंबियो।

ध्यान देना, किसके उपर झळुंबे? जो गरवा और नरवा हो उस पर झळुंबे। गुरु किसके उपर बरस जाता है? जो उसको पचा पाए। हरीन्द्रभाई ने ये रूखड का अच्छा भाष्य किया है। गुरुपरंपरा में एक बहुत बड़ा नाम है लाओत्सु। चीन का बहुत बड़ा दार्शनिक महापुरुष। जिन्होंने विश्व को ताओ दिया। ओशो ने उसका ताओ-उपनिषद कर दिया।

युवान भाई-बहन, लाओत्सु कहते हैं कि जनम से बीस या पचीस साल तक जो चेहरा होता है, जुवानी से आधी मंज़िल तक, इसी युवानी में कई उतार-चढ़ाव आता है, सफलता-निष्फलता। शादी हुई, ना हुई। पचास की उम्र में लाओत्सु कहते हैं हमारा चेहरा हम निर्मित करते हैं। पचीस साल तक का चेहरा गोड़ गिफ्ट है। उसके बाद हमारी चिंता, हमारी वासनाएं, हमारी निंदाएं, ये हमारा चेहरा निर्मित करता है। लेकिन पचास साल के बाद चेहरा हमारी भजन की कमाई नक्की करता है। जिन्होंने भजन किया होगा उसका चेहरा पचास साल के बाद देखना। रूखड़ उसमें है।

भजन चेहरा निश्चित करता है; भजन आंखें बना देता है; भजन बिना ओपरेशन नये होठ दे देता है; भजन नयी जूबां देता है; भजन सुनने योग्य सुनने के नये श्रवण देता है; भजन असंगपाणि प्रदान करता है; भजन आदमी के पैरों की गति कुछ बिलक्षण बनाता है। लाओत्सु का बड़ा प्यारा दर्शन लगता है। शेतान का चेहरा उसकी कमाई के अनुसार होता है, बदलता रहता है। एक भजनानंदी चेहरे का नाम रूखड़ है। रूखड वेला बाबा के रूप में तो व्यक्ति है, लेकिन रूखड सार्वभौम संतत्व का प्रतीक है; सार्वभौम साधुपना की मिशाल है। मेघाणी ने भी रूखडबावा की कथा लिखी। साधना के रहस्य बड़े गहन है; लेकिन कठिन साधना का जो फल है, वह फल केवल, केवल, केवल हरिनाम से मिलता है। दीया कहां प्रगट हुआ वही देखना चाहिए, कोडियां कहां बना वह नहीं। उसमें प्रगट हुई ज्योति का महत्त्व है। प्रकाश के हम उपासक है।

असतो मा सद्गमय।
तमसो मा ज्योतिर्गमय।

●

ऊंडा अंधारे थी प्रभु परम तेजे तुं लई जा।

हम अग्निपूजक है; प्रकाशपूजक है। तो, बाप, रूखड एक ऐसा साधुपना का प्रतीक है। शाद मुरादाबादी की गज़ल है -

ये सच है कि तूने मुझे चाहा भी बहुत है।
लेकिन मेरी आंखों को रुलाया भी बहुत है।
जो बांटता फिरता है जमाने को ऊजालें।
उस शख्स के दामन में अंधेरा भी बहुत है।

जो दुनिया को प्रकाश बांटता है उसके जीवन में अंधेरा ही होता है। मिशाल 'श्रीमद् भागवत' का कृष्ण। प्रकाश कृष्ण, बांटा वासुदेव-देवकी ने। उजाला बांट दिया, और उस शख्स के जीवन में अंधेरा! वो जेल में पड़े। नंद-यशोदा ने फिर उजाला बांट दिया, जा मथुरा, जा द्वारिका; कृष्ण को छोड़ दिया। पूरा जीवन नंद-यशोदा का अंधेरे में रहा; सांवरे कृष्ण के स्मरण में गया। यही तो दुनिया का रिवाज है आध्यात्मिक जगत के प्रेम पथिकों का।

तो, रूखड एक भजनानंदी बावा का नाम है। रूखड एक बड़ा अस्तित्व का परिचय है।

जेम झळुंबे मोरली उपर नाग जो।

सौराष्ट्र के मदारियों को जिसने देखा हो, मोरली वगाडे और नाग डोले, ऐसे रूखड झळुंबे! ज्ञान के उपर जैसे भक्ति झळुंबे। 'भागवत' में ज्ञान-वैराग पुरुष है, भक्ति और माया वे स्त्री हैं।

जेम झळुंबे नरनी उपर नार जो,
एम गरवाने माथे रूखड झळुंबियो।

रूखड अनहद का यात्री है। फल आये तब वृक्ष झुक जाय वह बात ओर है, वर्ना उसकी यात्रा तो ऊर्ध्वगमन की ही होती है। बीज में से जमीन फ़ाड़कर बाहर आता है। पथ्थर तोड़कर कोंपल को बाहर निकलना है। फिर निरंतर ऊर्ध्वगमन होगा। फल आये तब वृक्ष झुके वैसे रूखड को उपर जाते जब फल आये तब वह झुका।

इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि।

तो बाप, दो हाथों से कमाओ,लेकिन देना हो तब चार हाथ से बांटो। कमाइ करो तब नर रहो, लेकिन देते वक्त नारायण बनो। नर को दो हाथ, नारायण को चार हाथ। वेद का ऋषि द्रविण मांग रहा है और वो श्रेष्ठ; द्रव्य मानी केवल पैसा नहीं, कोई पीड़ित को देखकर आप की आंखों में आंसू आ जाय तो आप के पास द्रव्य है; आप पूंजीपति है; आप लक्ष्मीवान है। श्रेष्ठ द्रव्य मुझे दो।

'चित्तिं दक्षस्य'; समझदार कुशल सात्विक बुद्धिवान जैसे एकांत में या तो समूह में चिंतन करता हो। हे इन्द्र भगवान, मुझे ऐसा चिंतन दो; दक्ष लोगों का चिंतन मुझे प्रदान करो।

सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया।

●

बस एटली समज मने परवरदिगार दे,
सुख ज्यारे ज्यां मळे त्यां बधाना विचार दे।
पीठामां मारुं मान सतत हाजरी थी छे,
मस्जिदमां रोज जाउं तो कोण आवकार दे!

- मरीज़

'सुभगत्वमस्मे।' मुझे भगवान बनाओ। मैं ईश्वर का बेटा हूं, परमात्मा का अंश हूं। मैं दुर्भागी क्यों रहा? मेरी माँ है, बाप है, भाई है, पड़ौशी है, मेरी प्यारी पृथ्वी है, मैं दुर्भागी क्यों रहा? पृथ्वीवासी अमीर है। पृथ्वी पर हमें माँ मिलती है; पृथ्वी पर हमें बाप मिलता है; भाई-भांडुं मिलते हैं; पड़ौशी मिलते हैं; नदियां मिलती है; कैसे-कैसे विद्यावान हमे मिलते हैं! ऋषि ऐसा सौभाग्य मांगता है।

'पोषं रयीणामरिष्टिं तनूनां'; 'पोषं' का अर्थ मेरा आनंद का रोज पोषण हो; मेरा आनंद कमज़ोर ना हो, सुख ना जाय। हमारा आनंद प्रतिदिन पुष्ट हो। रोज अपने आप से हिसाब करो कि कल मुझे जो आनंद आया था वो आज बढ़ा? आज भजन में रुचि आई? आज कथा के सूत्र स्मरण में आते मेरी आंख भिग गई? कोई बुद्धपुरुष की याद आई?

लो आ गई उनकी याद वो नहीं आये...

गीत में क्या पीड़ा व्यक्त है! 'ईति संस्मृत्य।'-'भागवत।'

मुद्दते हो गई मुस्कुराये, आज सोचा तो आंसु भर आये ...

मेरी व्यासपीठ की अपनी निजता में ये भले फिलम गीत हो, लेकिन गोपीगीत है। ये गोपी का दर्द है; ये वृंदावनी पीड़ा है। जिसको कसक कहते हैं। 'ओधो, तुम गाओ गोपीगीत।' ओधवजी जब गोकुल से लौटकर आते हैं तब कृष्ण को संदेश देते हैं ऐसा ऐसा, तब भगवान कृष्ण ओधव को कहते हैं, 'मुझे और कुछ नहीं सुनना है, तुम मेरे पास गोपीगीत सुनाओ।'

हनुमानजी कहते हैं, 'प्रभु जीवन में सब से बड़ी विपत्ति मेरी निज व्याख्या में ये है, जब तेरी स्मृति खो जाय। हम तुझे भूल जाय, तेरा भजन ना हो।' 'भागवतजी' में शुकदेवजी ओधव के पास गोपीओं का एक शब्दप्रयोग कराते हैं, 'वाक् काय मानस।' ओधव, हम बहुत कोशिश करते हैं कि कृष्ण की याद ना आये लेकिन आती है तो तीन वस्तु पर असर करती है; तीन

वस्तु गोविंद प्रभावित कर देता है। वाक्, कृष्ण की स्मृति में हमारी वाणी प्रभावित होती है, हमारी काया प्रभावित होती है और हमारे मन पर उसका प्रभाव होता है। हम अपने बस नहीं रहते ओधव! मुझे कभी-कभी लगता है 'रामचरित मानस' की कई-कई चौपाई गोपीओं का अवतार हैं। गोपी चौपाई बन सकती है तो गोपी एक शे'र भी बन सकती है। कोई गीत भी बन सकती है।

श्याम विना व्रज सूनुं लागे...
ओधाजी, श्याम विना व्रज सूनुं लागे।

●

सोये कहां थे रात में तकिये भिगोये थे।
हम भी कभी किसीके लिए खूब रोये थे।

- बसीर बद्र

फूल कहे भमराने, भमरो वात वहे गुंजनमां,
माधव क्यांय नथी मधुवनमां ।

- हरीन्द्र दवे

हमें पता नहीं चलता, आध्यात्मिक जगत में हम पर कितने आवेश उतरते हैं! तो,

कह हनुमंत बिपति प्रभु सोई।
जब तव सुमिरन भजन न होई।।

तो, पूछा जाता था कि गत वर्ष से वैराग बढ़ा कि नहीं? औदार्य बढ़ा कि नहीं? राग-द्वेष की कसाई कम हुई कि नहीं? मज़े में हो, सुखी हो, ऐसा नहीं पूछा जाता। आनंद में हो, ऐसा पूछा जाता था। 'पोषं'; वेद का ऋषि कहता है, हमारे आनंद का पोषण हो; हमारा आनंद पुष्ट हो। सायनाचार्य कहते हैं, हमारी शरीर की तंदुरस्ती बढ़े। 'वाचः'; हमारी वाणी दूसरों को स्वादु लगे। कितनी प्यारी बात हमारा ऋषि मांग रहा है! ऋषि मांगता है हमें ऐसी वाचा मिले, हम ऐसा सुने, जो हमें स्वादु लगे; जो हमें आरपार उतर जाय। 'सुदिनत्वमह्नाम्', आख़िर में ऋषि ने मांगा, हमारे लिए रोज नूतन वर्ष हो; रोज नया प्रभात हो; हम रोज ताजे-तरोजे हो। यहां इन्द्र को संबोधित है और हनुमानजी को भी इन्द्र कहते हैं, इसलिए हनुमान का एक नाम कपीन्द्र है। और ऋषि ने जो मांग की है वो हनुमानजीरूपी इन्द्र पूरी कर सकता है। और याद रखना, लालच खराब है, लालसा प्यारी है। गोपी के शब्द है, 'कृष्णदर्शन लालसा।'

'हनुमान चालीसा' सिद्ध भी है, शुद्ध भी है। सिद्ध साधकों के द्वारा उसकी शुद्धता बढ़ाई गई है। तो, मांगना है तो हनुमान कपीन्द्र से मांगो कि मुझे द्रव्य दो; तू स्वर्णदेह है। आप 'बुद्धिमतां वरिष्ठं' है, इसलिए मुझे चतुर समझदार लोगों का चिंतन दो। ये शरीर एक नगर है उसमें चारों ओर विषय, विकार रूपी रक्षक ईन्द्रियों के द्वार पर कब्जा किये हैं। पूरा नगर सो गया हो तब मैं अकेला जागूं और मेरी अंतर्यात्रा शुरू हो।

'रामायण' और 'महाभारत' महाकाव्य है लेकिन मुझे कहने दो, ये स्वीकारते हुए मैं कबूल करता हूं, कबूल करने के बाद मेरे गुरु द्वारा दी गई नम्रता से कहना चाहता हूं कि ये दोनों महाकाव्य भी है और महामंत्र भी है। 'रामायण' महामंत्र है। ये अवश्य महाकाव्य है, एग्री, बट 'रामचरित मानस' इझ एवर महामंत्र, कायमी महामंत्र है। व्यासपीठ पर कोई ग्रंथ की आरती हो तो-

आरति श्रीरामायणजी की ।
कीरति कलित ललित सिय पी की ।।

रामकथा अंतर्यात्रा है; हरीहरी कथा है। कपीन्द्र से मांगे शुभ चिंतन। हम छोटे हो जाय; हमें भाग्यवान बनाओ।

कुमति निवार सुमति के संगी ।

जीवन कां पहलू बदल जाय। हमारा आनंद बढ़ाओ। कुश्ती-पहलवानी सिखते हैं वो सब का ईष्टदेव हनुमान है। सब हनुमान-उपासक है। 'हनुमान चालीसा' में पहले ये लिखा है, बल हम को दो।

व्यासजी 'महाभारत' में कहते हैं, कृष्ण से पूछा गया जब दुर्योधन की मृत्यु की योजना बनाई गई, दुर्योधन कहता है युधिष्ठिर को कि मैं एक और तुम लोग पांच भाई। एक व्यक्ति के साथ तुम पांच लोग लड़ो वो न्याय नहीं है। और युधिष्ठिर ने तर्क भी किया कि एक अभिमन्यु को मारने में तुम कितने थे? दुर्योधन ने जवाब नहीं दिया। फिर भी युधिष्ठिर द्युतप्रेमी आदमी था। जूआ खेलता है। युधिष्ठिर कहता हैं, पांच में से तू जिसका वरण करे वो आएगा, पांच नहीं लड़ेगा। कृष्ण वहां खड़े थे। उस वक्त कृष्ण ने युधिष्ठिर को कटु वाक्य कहे हैं, द्युत का प्रेमी फिर जूआ खेल रहा है! मुझे लगता है पांडु के पुत्र के भाग्य में वनवास के सिवा कुछ नहीं लिखा है। तुम राज के योग्य नहीं। तूं कहता है एक एक लड़े, क्या सहदेव दुर्योधन से लड़ सकेगा? तुम लड़ सकते हो? अर्जुन, नकुल की ताकत है गदायुद्ध में? कृष्ण ने कहा, भीम को मैं मानता हूं। बल में समान है लेकिन भीम के पास कला नहीं है। युद्ध जीतेगा दुर्योधन। बल हो ये ज्यादा महत्त्व का नहीं, बल के साथ कला हो; इसलिए 'हनुमान चालीसा' में तुलसीदासजी कहते हैं-

बल बुद्धि विद्या देहुं मोहिं ।

बल के साथ और दो चीज़ जुड़ी है।

युधिष्ठिर, न्याय से दुर्योधन को जीतना मुश्किल है; अनीति करनी पड़ेगी। और कृष्ण के बड़े भाई बलराम दुर्योधन प्रति सोफ्ट कोर्नर रखते थे। बलराम यात्रा पर निकल गये। भीम को याद दिलाया गया दुर्योधन की जांघ तोड़ने की प्रतिज्ञा। अर्जुन को कहा उसको संकेत करने का। अद्‌भुत है 'महाभारत।' वीणा लेकर नारद बलराम के पास आते हैं। बलराम को उकसाया, 'तुम्हारा चेला और भीम गदायुद्ध में है, जाकर देखो! बलराम को पता लग गया, जहां कृष्ण होगा वहां विजय होगा। भीम-दुर्योधन का युद्ध होता है। भीम को उसी समय संकेत होता है। जांघ तोड़ डाली है। दुर्योधन की चेतना चली गई, उसके बाद विजय के तान में भीमसेन ने अपनी लात चेतनाहीन दुर्योधन के सिर पर पटकी और कृष्ण ने कहा, खबरदार! उसकी मृत्यु तक बात ठीक है, बाकी मृतक शरीर को पैरों से हटाया तो! भीमसेन हट जाता है। कौन बलवान? जिनके पास बल के साथ विद्या हो। कौन विद्यावान? जिसके पास बुद्धि भी हो।

बुद्धिहीन तनु जानिके, सुमिरौ पवनकुमार ।
बल बुद्धि बिद्या देहु मोहिं हरहु कलेश बिकार ।।

एक भजनानंदी चेहरे का नाम रूखड़ है। रूखड वेला बाबा के रूप में तो व्यक्ति है, लेकिन रूखड सार्वभौम संतत्व का प्रतीक है; सार्वभौम साधुपना की मिशाल है। रूखड एक बड़ा अस्तित्व का परिचय है। रूखड अनहद का यात्री है। आज भी जूनागढ़ में गिरनार की तळेटी में बावा की मढ़ी है वहां रूखड़ नामक वृक्ष है। लोग आज भी वहां आकर श्रद्धा से अपना सर झुकाते हैं। ऐसी चेतनाएं गुमनाम प्रदेश की नीपज होती है।

मानस-हनुमानचालीसा
॥ ४ ॥

सूर्य, चन्द्र और अग्नि ये शिवरूप हनुमानजी के तीन नेत्र है

एक श्रोता ने पूछा कि 'कल 'ऋग्वेद' के एक मंत्र से कथा का आरंभ हुआ था, तो वेद का काल क्या है? वेद को कितना समय हुआ है?' बाप, वेद का काल सब विद्वानों ने बिलग-बिलग निश्चित किया है। श्रद्धाजगत कहता है कि वेद अपौरुषेय है, जिसका कर्ता कोई नहीं है। यद्यपि वेद के मंडलों को आप देखे, उसके सुक्तों को आप देखे, तो मंडल की संख्या, सुक्त की संख्या, मंडल का, सुक्त का, ऋषि का नाम भी दिया जाता है और छंद का नाम भी दिया जाता है। ये वेद प्रबंध का एक रूप है। हो सकता है जैसे पयगंबर महंमदसाहब को आयातें उतरी अल्लाह के घर से और निमित्त बने पयगंबरसाहब और पवित्र 'कुरान' की आयातें लोगों को मिली एक ग्रंथ के रूप में। अपौरुषेय वेद भगवान की श्वास माना जाता है। ऊतरा होगा, रिसिव किया किसी ऋषिमुनियों ने और श्रुतिरूपे सुनते-सुनते कर्णोपकर्ण हम तक आया, आखिर में ग्रंथ का रूप वेदों ने धारण किया। लेकिन उसका काल निश्चित करना मेरे लिए तो बिलकुल मुश्किल है। फिर भी विनोबाजी करीब दस-ग्यारह हजार वर्ष की बात करते हैं। लोकमान्यतिलक की मान्यता आठ हजार की है; कुछ कम, कुछ ज्यादा। महर्षि अरविंद का भी वेद की कालगणना में एक मत है। सबका सम्मान। अपना काम नहीं ये निर्धारण करना।

मैं एक वाक्य कहकर आगे बढ़ूं, सत्य कब बोला गया उसकी चिंता मत करो, जो बोला गया वो सत्य होना चाहिए। वेद आज भी प्रकट हो सकता है। बोला गया वो सत्य होना चाहिए, एक बच्चे के मुख से क्यों ना बोला गया हो; एक माता के मुख से क्यों ना बोला गया हो। मुझे वेद बहुत प्रिय है। एक भ्रांति का नाश होना चाहिए कि जो लोग कहते हैं कि वेदों में स्त्रियों को अधिकार नहीं मिला है, ये गलत है। मूलत: वेदों का दर्शन करने से पता लगता है कि वेदों ने भरपूर स्त्रीस्वातंत्र्य की इज्जत की है। आप देखेंगे तो पायेंगे कि वेद में जितने पुरुष ऋषि है इससे कई गुना मातबर श्रेष्ठ महिला ऋषि है। वेदों में जहां तक मेरी दृष्टि है, आपको कई स्त्री-सुक्त मिलेंगे। उसको भी दस हजार साल पुराना माना गया है; ये वेदकालीन बात है।

वेदों में सरस्वती की बहुत महिमा गाई गई। पूरा का पूरा सुक्त मिलता है, जो मैंने पढ़ा है। तो, आपने पूछा तो कहूं, ये बड़ा जटिल मामला है। फिर भी वेद हमारा अद्‌भुत खजाना है। ये वेदों का ही एक अवतार है 'रामचरित

मानस'। ये मैं नहीं कहता, इस्लाम धर्म के एक बहुत बड़े महापुरुष रहीमसाहब कहते हैं -

रामचरित मानस बिमल संतन जीवन प्राण।
हिंदु आन को वेद सम जब नहि प्रगट कुरान।।

ये रहीम का अभिप्राय है। मधुसूदन सरस्वती काशी के पहुंचे हुए जाग्रत महापंडित, वो काशी को आनंद का कानन कहते हैं। आनंद के जंगल में तुलसी चलता फिरता वृक्ष है और उसका जो एक फूल है, विकसित ग्रंथ है उस पर रामरूपी भंवरा गुनगुना करता है। अच्छा लगता है; ये रूखड है। मेरी दृष्टि में तुलसी रूखड है। घूमते रहते हैं वो रूखड है। नारद रूखड है, हनुमानजी रूखड है। कुछ-कुछ हम भी, हम में हम और आप सब आते हैं! तो, हमारे लिए तो ये ('रामायण') भी वेद है। श्रद्धाजगत में वेद से भी उसको उपर स्थान मिल जाता है; वेद तो उसकी स्तुति करता है। 'रामचरित मानस' की आरती वेद ऊतारता है -

गावत बेद पुरान अष्टदस।
छओ सास्त्र सब ग्रंथन को रस।
मुनि जन धन संतन को सरबस।
सार अंस संमत सबही की।
आरति श्री रामायणजी की।

प्रत्येक युग का नया ब्रह्म होता है। सतजुग का ब्रह्म वेद-उपनिषद है। उसके बाद कालक्रम में ब्रह्म बिलग-बिलग रूप में प्रकट हुआ होगा। कलियुग का ब्रह्म 'रामायण' है। ब्रह्म रोज नया है; कथा रोज नयी है। राम में प्रकट हुआ था ब्रह्म। एक ऐसे ब्रह्मतत्त्व ने राम के रूप में काम किया कि धनुषबाण की जरूरत पड़ी तो राम ने धनुषबाण रखे हैं। कृष्ण के काल में ब्रह्म प्रकट हुए बांसूरी के रूप में; वहां एक बांसूरी के रूप में नया ब्रह्म आया। बांसूरी ब्रह्म है; बांसूरी ब्रह्मध्वनि है; बांसूरी ब्रह्मवेणु है। भगवान बुद्ध आये तो एक नया ब्रह्म आया, ध्यान, करुणा, समाधि; बुद्ध को बांसूरी की जरूर नहीं पड़ी। महावीर आये तो अहिंसा के रूप में नया ब्रह्म आया। ब्रह्म रोज नया होता है और ब्रह्म रोज वर्धमान होता है। 'वर्धमान' शब्द वेद का है। 'प्रतिक्षण वर्धमानं'- नारद भक्तिसूत्र। मेरे लिए कलियुग का ब्रह्म है कथा; रोज नयी, रोज नयी। वो ही कथा होती है; मैं आज पचपन साल से गाता हूं; बचपन से पचपन की मेरी यात्रा है।

वेदों में लिखा है बाप कि आप तीन प्रकार का ध्यान रखकर जीओ तो एक सौ सोलह साल जी सकते हो। इससे ज्यादा वेद मना करता है। यद्यपि कृष्ण सवासौ साल जीए। ईश्वर है उसको अतिक्रमण करने का अधिकार है। मेरे तुलसी करीब-करीब एक सौ छब्बीस साल जीए। हम तीन का निर्वहण नहीं कर सकते इसलिए हम अंदर चले जाते। ये सत्य-प्रेम-करुणा कहां से आया? ये सूत्र वेद में प्राप्त होता है। जिस धर्म को हम सनातन धर्म कहते हैं, उसको पुराना मत समझो। सनातन वो है जो वर्धमान है, नित्यनूतन है, रोज नया है। सत्य आदमी को बड़ी दीर्घायु प्रदान करता है। फिर प्रेम, सूफीलोग उसको महोब्बत या तो चाहत कहते हैं। 'हनुमानचालीसा' क्या है? चालीसा का मतलब है, 'चा' मानी चाहत; 'ली' मानी लीनता; 'सा' मानी साक्षात्कार। हमारी चाहत बढ़ेगी। और बढ़ते-बढ़ते ये चाहत लीनता में परिवर्तित होगी। लीन हो जाय; कोई हरि में लीन हो गया।

एक बुद्धपुरुष एक बार आपसे महोब्बत करता है तो फिर आपको याद करता है, तो लीन हो जाता है। ये लीनता, ये तल्लीनता, ये तादाम्य; मेरे मत के अनुसार चाहत बढ़ती है तो आगे का पडाव लीनता ही हो सकता है। बढ़ी हुई चाहत का आखिरी पडाव है तल्लीनता। न

देश, न काल, न व्यक्ति, न विषय, सब समान। चाह तभी बढ़ेगी कि रोज ब्रह्म नया हो। ब्रह्म नया है, है; हमने उसको पुराना कर दिया। फिर आती है लीनता; और लीनता का परिणाम है साक्षात्कार, कृतकृत्यता।

देखो, देवता यद्यपि देवता है, प्रतिष्ठित है, हम मंदिर में एक जगह बिठा देते हैं, फिर भी वो लीन नहीं है, इसलिए साक्षात्कार तक देवता नहीं पहुंच पाते। और बंदर लीन नहीं है, चंचल है। ये एक जगह प्रतिष्ठित नहीं है। घूमता रहता है, लेकिन वो कृतकृत्यता प्राप्त कर लेता है, ऐसा 'मानस' में हस्ताक्षर है। बंदरों को चाहत है, वे ठाकुरजी को देखने में लीन है। मनोविज्ञान कहता है कि बच्चा जिस रंग की चीज़ देखता है इसमें इतना तल्लीन हो जाता है कि उसके बाद यदि वो मलमूत्र का त्याग करता है तो उसमें जो चीज में तल्लीन हुआ था उसका रंग तक आने लगता है। ये स्वाभाविक है। चालीसा को समझे। पहला सोपान है चाहत, यात्रा आगे बढ़ेगी तो दूसरा है लीनता, यात्रा आगे बढ़ेगी तो मंज़िल है साक्षात्कार।

तो, प्रत्येक व्यक्ति का, प्रत्येक काल का नया ब्रह्म है। महावीर वर्धमान रोज बढ़ता है। तो, वेद का काल हम निर्धारण नहीं कर पाते। या तो व्यक्ति की प्रशंसा होती है या तो निंदा होती है, मूल्यांकन नहीं होता; मूल्यांकन करे। व्यास ने मूल्यांकन किया। कृष्ण को भी कठेडे में खड़ा किया है; कवि है। व्यास और वाल्मीकि नहीं होते तो कृष्ण और राम का परिचय कौन कराता? दुनिया की दीवारें खत्म होगी, लेकिन व्यास और वाल्मीकि ने जो चित्र रेखांकित किये हैं वे नहीं भूले जाएंगे।

तो, मूल्यांकन की बात है। किसी घटना की एक पक्ष निंदा करता है, एक पक्ष प्रशंसा करता है, लेकिन मूल्यांकन नहीं कर रहा है। युवानी चाहती है मूल्यांकन। और मूल्यांकन करने की सद्बुद्धि यदि हममें आ जाय सत्संग से तो हमारे जीवन में रोज एक नया ब्रह्म आयेगा। वो हमें उबने नहीं देगा। मेरे लिए कलियुग का ब्रह्म है रामकथा, मेरे व्यक्तिगत रूप में, मुझे उसकी जरूरत है। अहमद फ़राज़ का एक शे'र है -

उसकी वो जाने उसके पासे-वफ़ा था कि न था,
तुम 'फ़राज़' अपनी तरफ़ से तो निभा जाते।

जीवन जीना है युवा भाई-बहन, तो दूसरा तुम्हें दगा दे, लेकिन तुम तो न्याय निभाते जाते। यहां कौन कायम किसी का हुआ है और कौन कायम पराया रहा है?

कितना आसां था तेरी हिज्र में मरना जाना,
फिर भी इक उम्र लगी जान से जाते जाते।

बाप, हम अपनी ओर से वफा निभायें। बाप, चाहत, लीनता और साक्षात्कार। जो बोला वो सत्य होना चाहिए। सत्य कब बोला गया, कौन निर्णय कौन करे?

चारों जुग परताप तुम्हारा। है परसिद्ध जगत उजियारा।।
साधु संत के तुम रखवारे। असुर निकंदन राम दुलारे।।

क्रम में 'हनुमानचालीसा' की चर्चा गोस्वामीजी करते हैं। इन रहस्यों को समझने की हम सब विनम्र संवादी चर्चा कर रहे हैं। जुग मानी दो और चार युग मानी चार दो-दो को जोड़ के हुआ आठ। ये आठों पर हनुमानजी का प्रभाव है। ये प्रसिद्ध है, जाहिर है। और इस प्रताप से आपने जगत को ऊजियारा दिया है। ये चार जुग क्या है? दस चतुर्थ तो आप के सामने पेश किये। ये चार है धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। उसकी युगसंदर्भ में व्याख्या करे तो ये भी कर सकते हैं कि सतजुग धर्मयुग है; त्रेता अर्थयुग है। सब के विशेष अर्थ है। द्वापर कामयुग है और कलियुग मोक्षयुग है।

सतजुग में धर्म की मात्रा सर्वोपरि रही। त्रेतायुग में यज्ञ कर्मकांड थे और इससे अर्थ की प्राप्ति हो जाय,

गायों की प्राप्ति हो जाय, वर्षा की प्राप्ति हो जाय, सब अर्थ लाभ की चर्चा त्रेतायुग में हो। द्वापर आया तो काम आया। कामयुग का मतलब है स्वार्थयुग। द्वापर की परिभाषा में, 'महाभारत' में कामयुग की, स्वार्थयुग की उद्घोषणा है। निजी स्वार्थ की बातें आती है। भारतीय चतुर्थ पुरुषार्थ में ऋषिओं ने उसका स्थान दिया तो देश का ऋषि कितना प्रेक्टिकल लगता है! कितना ये निर्भीक लगता है! द्वापर ये काम का युग है; काम का युग मिन्स दूसरे अर्थ में एक कार्य का युग है, पुरुषार्थ का युग है। खूब काम हुआ है 'महाभारत' में, खूब हुआ है द्वापर में, कर्म की बड़ी प्रतिष्ठा कृष्ण ने की; वहां तक कह दिया कि काम किये बिना कोई भी व्यक्ति एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता। आप कहेंगे कलियुग में मोक्ष? हां; कलियुग में मोक्ष बहुत सस्ता है, ध्यान देना। सतजुग में मोक्ष मिलने में बहुत देर लगती थी; त्रेता में भी बहुत देर लगती थी; द्वापर में भी बहुत देर लगती थी; कलियुग में चपटी बजा और मोक्ष! मैं प्रमाण दूं -

राम भजत सोइ मुकुति गोसाईं।
अनइच्छित आवइ बरिआई।

तुलसी चारों युग की चर्चा करते हैं। वो ही कलियुग में केवल नाम से मुक्ति प्राप्त कर लेता है, इसलिए कलियुग मोक्ष का युग है। 'अप्पदीपो भव', भगवान बुद्ध ने कहा था। नगर बहुत सुंदर हो, रास्ता सुंदर हो, तुम्हारे चरण भी बहुत सुंदर हो, आप किसी की चरणपूजा करने ऐसे नगर जाना चाहे तो भी आप को जाना तो आप के खुद के चरणों ही पड़ेगा। आदमी को स्वयं कुछ करना होगा। गुरुकृपा बहुत काम करती है लेकिन आदमी को खुद स्वयं उठना चाहिए। उपनिषद कहता है, 'उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।'-उठो, जागो और लक्ष्यप्राप्ति के लिए लगे रहो। कभी नाळियेर को आप फोड़े तो एक घा से नहीं फूटता, सात-आठ घाव करे तो नहीं फूटता, आठवें घाव से फूट गया तो, पहले

के सात घाव ने उसको फोड़ने में मदद की। आइन्स्टाइन ने सातसो बार प्रयोग किया तभी सफलता मिली।

न हारा है ईश्क, न दुनिया थकी है ।
दीया जल रहा है, हवा चल रही है।
चरागों के बदले मकां जल रहा है।
नया है ज़माना, नयी रोशनी है।

तो, कलियुग ये मोक्ष का युग है। हम हरि नाम ले, हम सत्संग करे। किया हुआ कभी विफल नहीं होता, ये सिद्धांत है। तो चार युग; चार पुरुषार्थ-धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष; और युग मानी दो। धर्म का दो रूप है, एक आंतर्धर्म, एक बहिर्धर्म। बहिर्धर्म मानी तुम को पूजापाठ करना है तो स्नान करके पवित्र कपड़ें पहनो, ठाकोरजी की सेवा करो, ये सब धर्म है; है धर्म लेकिन बहिरंग है। और दूसरा धर्म आंतर्धर्म है। हनुमानजी का प्रभाव बहिरंग धर्म पर भी है और आंतरिक धर्म पर भी है। आंतरिक धर्म क्या है? दूसरे के बारे में शुभ चिंतन आंतरिक धर्म है, उसमें तिलक-माला की जरूरत नहीं है। ओनेस्टी आंतरिक है। बहिर्धर्म तो आख़िर में छोड़ना पड़ता है। बहिर्स्वच्छता ये बहिर्धर्म; और आंतरिक पवित्रता ये आंतरिक धर्म। कभी-कभी बहिर्स्वच्छता का लोप हो सकता है, लेकिन आंतरिक पवित्रता का लोप न हो। और ये दोनों स्थिति पर हनुमानजी की कृपा हमें ज्यादा प्रताप प्रदान कर सकती है। धर्म मानी कोई विशेषणयुक्त बात नहीं है; धर्म मानी स्वभाव; धर्म मानी अपनी निजता, अपना मौलिक भाव, सहज धर्म। ये जैसे-जैसे विकसित होता है वैसे-वैसे बहिरंगपना कम होता जाएगा। स्थूल से सूक्ष्म तक की यात्रा होगी ही। हनुमानजी में आप सूक्ष्म रूप भी देखोगे, विराट रूप भी देखोगे।

सूक्ष्म रूप धरि सिय ही दिखावा ।
विकट रूप धरी लंक जलावा ।।

कभी हनुमान, कभी कबीर, कभी नानक, कभी मीरां, कभी सहजोबाई, इन सब ने हमारा बहिरंगता का अंचला फेंक दिया और हमें अंदर की पाकीज़गी से परिचय करवाया।

फिर अर्थ; अर्थ के दो रूप है। एक पुरुषार्थ, दूसरा परमार्थ। अर्थ का अर्थ केवल पैसा करे तो अर्थ के लिए हमें पुरुषार्थ करना पड़ेगा, मेहनत करनी पड़ेगी। दहेशत से कुछ नहीं होता, मेहनत से कुछ-कुछ होता है, कृपा से सब कुछ होता है। हमारा पुरुषार्थ उसके प्रताप से प्रभावित होता है। पुरुषार्थ करना चाहिए लेकिन हेतु परमार्थ का हो। श्री हनुमानजी महाराज का प्रत्येक पुरुषार्थ परमार्थ के लिए है; हर कदम सीताशोध के लिए है; हर पुरुषार्थ का कदम सेतुबंध के लिए है; दुरित के नाश के लिए है।

तीसरा, काम; यहां काम का अर्थ केवल काम मानी कार्य, कर्म इस अर्थ में काम को लेना। कर्म के दो जुग स्वरूप, निष्काम कर्म और सकाम कर्म। यदि हम सकामता से कुछ काम करते हैं, कोई हेतु लेकर कोई अपेक्षा लेकर कोई कामना लेकर तो भी हनुमंत आश्रय करने से उनके प्रभाव से इस काम में ज्यादा प्रकाश आयेगा। और निष्काम कर्म करने से हनुमंत आश्रय से हम अहंकार से मुक्त रह पाएंगे, वर्ना हम बिलकुल निष्काम भाव से कर रहे हैं इसका एक अहंकार का अंकुर फूट सकता है। और मोक्ष, मुक्ति; नरेन्द्रबापा शास्त्री कहते थे कि श्रेष्ठ का स्वीकार करना यही सब से बड़ा त्याग है। मुक्ति में दोनों प्रभाव हनुमानजी का है। भक्ति का स्वीकार करना अपने आप में मुक्ति है। श्री हनुमानजी महाराज मोक्षवादी है ही नहीं, हनुमानजी ने भगवान रामजी से कहा कि आप परलोकगमन करे, मैं नहीं आउंगा। लेकिन एक बात, जब तक धरती पर आप की कथा चलती रहेगी, मैं धरती छोड़ना नहीं चाहता। कथा

बंद हो जाएगी तो मैं आ जाउंगा। तो, धर्म के आंतर्-बाह्य रूप; अर्थ के पुरुषार्थ-परमार्थ रूप; काम का निष्काम और सकाम कर्म का रूप और मोक्ष की भक्ति और ये मुक्ति इन दोनों पर हनुमंत प्रभाव काम कर सकता है।

उजाला तीन प्रकार से हो सक्ता है। एक तो, हमारे घरमें दीपक जला दे तो उजाला हो जाय, लेकिन एक दीपक से घर का उजाला केवल घर के कमरे को कवर करता है। यदि हमारे कमरे जितनी दुनिया है, तो दीप से हमारी निजता प्रकाशित हो जायेगी। दूसरा प्रकाश उजागर करने का अग्नि; आपके आंगन में यज्ञकुंड है, जो मशाल आपने जलाई, दीपक नहीं, ज्यादा अग्नि वो पूरी गली को उजागर कर सकती है। अग्नितत्त्व पूरे आंगन को प्रकाशित कर सकता है। एक दूसरा प्रकार चंद्र; शुक्ल पक्ष में पूर्णिमा आते-आते बहुत बड़े विस्तार को प्रकाशित करता है। जगत को उजागर करता है। और तीसरा प्रकाश का बिंदु है सूर्य, वो पूरे जगत को प्रकाशित करता है। और यही शिवरूप हनुमानजी के तीन नेत्र है।

वन्दे देवमुमापतिं सुरगुरुं वन्दे जगत्कारणं
वन्दे पन्नगभूषणं मृगधरं वन्दे पशूनां पतिम्।
वन्दे सूर्यशशाङ्कवह्निनयनं वन्दे मुकुन्दप्रियं
वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम्।।

हे महादेव, तुम्हारे तीन नेत्र है, सूर्य, चंद्र और अग्नि। और तीनों का काम अपनी-अपनी मर्यादा में सबको उजागर करने का है। दीपक ज्ञान का संकेत करता है। 'रामचरित मानस' में ज्ञान-दीपक का वर्णन है 'उत्तरकांड' में। चंद्र ये भक्ति का प्रकाश है। चंद्र शिव का प्रकाशयुक्त तीसरा नेत्र, शिवरूपहनुमान का तीसरा नेत्र; वो भक्ति का संकेत करता है। 'रामचरित मानस' में भक्तिमणि की चर्चा है। और तीसरा, सूर्य। राम स्वयं सूर्य है। 'राम सच्चिदानंद दिनेसा।' तो, शिवरूप हनुमानजी के ये तीन नेत्र है। ये तीनों के द्वारा, कभी ज्ञान द्वारा, कभी भक्तिरूपी चंद्रमा द्वारा, परमात्मा के सूर्यरूपी प्रकाश के द्वारा हनुमानजी पूरे जगत को उजागर करते हैं।

कथा में शिवजी सती को लेकर कुंभजऋषि के पास कथा सुनने जाते हैं। शिव स्वयं श्रोता बन गये! शिवजी रामकथा के आदि सर्जक है। कथा सुनकर शिव-सती लौटते हैं; राम का चरित्र विद्यमान था। भगवान के विरही रूप को देखकर सती को शंका होती है! शंकर ने कहा, शंका ना करो। सती ना मानी; परीक्षा करने गई। आखिर में शिव ने सती का त्याग किया। कैलास जाकर शिव समाधि में बैठ गये। और सत्ताशी हजार साल के बाद समाधि से मुक्त हुए। उसी समय दक्षयज्ञ की बात आती है। सती मानी नहीं, यज्ञ में गई, अपमान हुआ, सती ने देह अग्नि को सोंप दिया। हाहाकार हो गया! तुलसीजी कहते हैं, सती का दूसरा जन्म हिमालय के घर पुत्री के रूप में हुआ, पार्वती के रूप में हुआ।

पार्वती की तपस्या। आखिर में पार्वती और शिव का ब्याह होता है। कार्तिकेय का जन्म होता है। फिर एक दिन कैलास के शिखर पर शिव सहज आसन में बिराजित है। पार्वती आकर शंकर से जिज्ञासा करती है कि हे भगवन्, रामतत्त्व क्या है, ये रामकथा के माध्यम से सुनाओ। शिवजी पार्वती को धन्यवाद देते हैं कि हे देवी, मेरे मुख से रामकथा की गंगा जो आप बहवाने जा रही है उसके निमित्त आप बनती हो, इसलिए आप उपकारी है। हे देवी, राम धरती पर प्रकट हुए उसके कई कारण है, जय-विजय; दूसरी सतीवृंदा; तीसरा कारण नारदशाप; चौथा मनु और शतरूपा की तपस्या का फल; पांचवां राजा प्रतापभानु को ब्राह्मणों ने शाप दिया, इसलिए प्रतापभानु रावण होता है, अरिमर्दन कुंभकर्ण और धर्मरुचि विभीषण बनता है। तीनों भाईयों ने तपस्या

करके दुर्गम वरदान प्राप्त किये। रावण के त्रास से धरती अकुला उठी और गाय का रूप धारण करके, ऋषिमुनि देवता सबको संग लेकर ब्रह्मा के पास जाती है और कहती है, मुझे परद्रोहियों की पीड़ा से मुक्त करो। सबने मिलकर प्रभु को पुकारा। आकाशवाणी होती है, 'मैं अंशों के साथ अयोध्या में अवतार लूंगा।' अयोध्या का वर्तमान राजाधिराज दशरथजी ज्ञानी है, गुणनिधि है, भक्त भी है, कौशल्यादि प्रिय रानियां है। एक दिन दशरथजी को ग्लानि हुई, मुझे पुत्र नहीं है; और राजा गुरुद्वार जाता है। समस्या का जवाब कहीं से भी ना मिले तब अपने गुरु के द्वार जाके पूछना। गुरु समाधान है।

शृंगिऋषि को बुलाकर पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया। यज्ञदेव यज्ञ के रूप प्रसाद का चरु लेकर निकलते हैं। राजा ने रानियों को बुलाकर यथाजोग यज्ञ की खीर बांटी; आधा भाग कौशल्या को, पा भाग कैकेयी को, पा भाग के दो भाग करके कैकेयी और कौशल्या के हाथों से सुमित्रा को दिया। तीनों रानियां सगर्भा स्थिति का अनुभव करने लगी। स्वयं परमात्मा कौशल्या के गर्भ में आये। कुछ काल बीता। भगवान को प्रकट होने का समय निकट आया। पंचांग अनुकूल हुआ है। चर-अचर, जड़-चेतन पूरा अस्तित्व हर्षित है, क्योंकि राम को प्रकट होने की बेला है। त्रेतायुग, चैत्रमास, शुक्लपक्ष, नौमी तिथि, मध्यदिवस, माँ कौशल्या के भवन में सगुन होने लगे। पूरा जगत जिसमें निवास करता है ऐसा परब्रह्म परमात्मा, भगवान वो माँ कौशल्या के राजभवन में चतुर्भुज विग्रह में प्रकट होते हैं। ठाकोरजी नारायण के रूप में आये हैं।

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्‌भुत रूप बिचारी।।

माँ कौशल्या ने अद्‌भुत रूप निहारा! माँ को ज्ञान हुआ। प्रभु मुस्कुराये। फिर माँ ने कहा, 'भगवान, आप का स्वागत, आपने हम को पुत्र बनकर आने को कहा था, आज आप नारायण रूप में आये। मनुष्य को तो दो हाथ होते हैं।' कौशल्या कहती है, 'मुझे दो हाथवाला भगवान चाहिए।' भगवान दो हाथ हो गये। प्रभु नवजात बच्चे की तरह छोटे हो गये। माँ से कहां, 'अब?' माँ ने कहा, 'बच्चा बोलेगा थोड़ा? वो तो रोयेगा। आप रोओ।' सुनते ही भगवान माँ के अंक में शिशुरुदन करने लगे! बालक के रुदन की आवाज़ सुनकर ओर रानियां सभ्रम दौड़ आई! आया ब्रह्म, हुआ भ्रम! महाराज दशरथजी को बधाई पहुंचाते लोगों ने कहा, 'बधाई हो, आपके घर पुत्र का जन्म हुआ।' महाराज को ब्रह्मानंद हुआ। गुरुजी को बुलाया। वशिष्ठजी आते हैं, निर्णय होता है, ब्रह्म बालक बनकर आपके आंगन में आया। राजा परमानंद में डूब गये। त्रिभुवन में उत्सव शुरू हुआ। आप सभी को रामजनम की बधाई हो।

प्रत्येक युग का नया ब्रह्म होता है। सतजुग का ब्रह्म वेद-उपनिषद है। कलियुग का ब्रह्म 'रामायण' है। राम में प्रकट हुआ था ब्रह्म। एक ऐसे ब्रह्मतत्त्व ने राम के रूप में काम किया कि धनुषबाण की जरूरत पड़ी तो राम ने धनुषबाण रखे हैं। कृष्ण के काल में ब्रह्म प्रकट हुआ बांसूरी के रूप में; बांसूरी ब्रह्म है; बांसूरी ब्रह्मध्वनि है; बांसूरी ब्रह्मवेणु है। भगवान बुद्ध आये तो एक नया ब्रह्म आया-ध्यान, करुणा, समाधि; महावीर आये तो अहिंसा के रूप में नया ब्रह्म आया। मेरे लिए कलियुग का ब्रह्म है कथा; रोज नयी, रोज नयी। मैं आज पचपन साल से गाता हूं; बचपन से पचपन की मेरी यात्रा है।

मानस-हनुमानचालीसा
॥ ५ ॥

हनुमान और 'हनुमानचालीसा' महाऔषध है

एक जिज्ञासा है, एक प्रश्न कल था कि एक कथा में आपने कहा था कि 'हनुमानचालीसा' का उपयोग औषधि के रूप में मत करना। यस, मुझे याद है। कभी-कभी आदमी 'हनुमानचालीसा' जैसे रहस्यपूर्ण एक नाद को छोटे-बड़े दर्द के समापन के लिए, मुक्ति के लिए यूझ करते हैं! छोटे-बड़े रोग का इलाज तो आज का देशी वैद, विदेशी दवायें, आज के डोक्टर्स कर सकते हैं। जहां जिसकी जरूरत हो उससे काम लिया जाय। 'हनुमानचालीसा' में लिखा है, 'तुम्हरे भजन राम को भावे।' जिससे राम तक की प्राप्ति बताई हो ऐसे 'हनुमानचालीसा' से छोटे-बड़े दर्द के समापन के लिए उपयोग करना इतना लाभपूर्ण नहीं है। हां, हनुमान और 'हनुमानचालीसा' महाऔषध है; और महाऔषधि का उपयोग छोटी-बड़ी बिमारी के लिए नहीं किया जाय। जो असाध्य रोग की औषधि है उसको एक दिन बुखार आ गया, शरीर टूटता है और दवा का वहां इस्तेमाल करना ये औषध-अज्ञान है! ये 'हनुमानचालीसा' महाऔषध भवरोग का नाश करता है।

'संकट से हनुमान छुडावै।' मैंने कई प्रकार के संकट बताये कि आदमी पर कौन-कौन से संकट होते हैं। धर्मसंकट, राष्ट्रसंकट, आदि। कुछ हमारी मानसिक बिमारियां है; जो हमें भवरोग लागू हुआ है उसके लिए हनुमानजी औषध है। रामकथा-हरिकथा क्या है? तो, तुलसी लिखते हैं -

जासु नाम भव भेषज हरन घोर त्रय सूल।
सो कृपाल मोहि तो पर सदा रहउ अनुकूल।।

हरि का नाम महाऔषध है। हनुमान भी हरि का नाम है। ये महाऔषध निर्दोष है। कोई उसकी प्रतिक्रिया नहीं है, ऐसी निर्दोष औषधि है। रामकथा ये चलता-फिरता औषधालय है। उसकी कोई आडअसर नहीं होती।

आप शेर को देखो तो आक्रमक है; उसकी शालीनता अद्‌भुत है! उसको छेड़ो ना तो भूखा हो तो भी लक्ष्मण- रेखा नहीं नांघता। फिर भी शेर शेर है, छेड़ाय ना! शेर का बच्चा हो उसको आप अपने बच्चे की तरह उठा

सकते हो; वो निर्दोष है, आक्रमक नहीं है। है शेर का बच्चा और वो शेर का बच्चा ऐसा होता है, जंगल में जितने हाथी हो उसको पता लग जाय कि एक शेर का बच्चा है, तो हाथी आक्रमकता छोड़ देते हैं। रामकथा क्या है? हनुमान क्या है? शेर का बच्चा। गोस्वामी कहते हैं, एक ऐसा महाऔषध है, जो निर्दोष है। इनमें से कितने चेहरे रोम में भी थे, यहां भी है! आपको क्या हो गया? क्यों आप आते हैं? कुछ हो रहा है।

क्या रोग लगा बैठे हैं?
दिल हमको भूला बैठे हैं,
हम दिल को भूला बैठे हैं।

रामकथा धर्मसभा नहीं है, प्रयोगशाला है। मुझ पर 'रामायण' प्रयोग कर रही है; मैं आप पर प्रयोग कर रहा हूं। उसका कुछ परिणाम होगा। ये प्रेमसभा है और प्रेम महारोग है। रामभक्ति क्या है? परमव्याधि है। और ये परमव्याधि, परमरोग, लाखों तंदुरस्ती जिसके पास कुछ भी नहीं है।

रामकथा की कोई आडअसर नहीं होगी। कई लोग मेरे पास आकर कहते हैं, 'बापू, घर के एकाद सदस्य आपकी कथा सुनते हैं, घर में ध्यान नहीं रखते!' उसने मेरी कथा सुनी ही नहीं है! यस, मैं मेरा बचाव नहीं कर रहा हूं। मैं सत्य उद्घोष कर रहा हूं। मेरी कथा सुनेगा वो अपनी फर्ज़ कभी चुकेगा नहीं। मेरी कथा मिन्स रामकथा, ये 'मेरी कथा' तो शब्द का बंधन है। आज किसी ने चिठ्ठी लिखी है, 'Bapu, When you talk in english, it is very beautiful.' मैं कहां इंग्लिश बोलता हूं? एकाद शब्द सहज प्रवाह में आया तो बोल देता हूं। लेकिन आपको व्यासपीठ के प्रति प्यार और आदर है इसलिए सबकुछ आपको ब्युटिफुल लगता है। और ये प्रेम प्रकृति है, जहां हमारा प्यार और आदर होता है ये सब चीज हमें अच्छी लगने लगती है। प्रेम की हर चीज सुंदर लगती है। मेरी इंग्लिश आपको ब्यूटिफूल लग रही है, ये आपका आदर आपको बुलवा रहा है। 'महबूब की हर चीज महबूब लगती है।' अपना बच्चा हमको कितना प्यारा लग रहा है! ये सब चिंतनीय है। स्मरण केवल कमरे में ही नहीं होता, खूली आंखों से स्मरण करो।

ये समग्र दुनिया साधना का केन्द्र है। इसलिए मेरी कथा ये धर्मशाला नहीं है, प्रयोगशाला है, वहां कुछ रिझल्ट है। तीन व्यक्ति कृष्णचरित्र में ऐसी दिखती है- एक उद्धव, एक कृष्ण, तीसरी कृष्णा-द्रौपदी। कृष्णा को कृष्ण के पीतांबर पहना दो तो वो कृष्ण ही दिखेगी। और कृष्ण को द्रौपदी की साड़ी पहना दो तो वो द्रौपदी-कृष्णा ही दिखता। ये डूबो देता है। हमारे चरण की पीठ होती है। जैसे कोई पादुका पर पग रखो तो पादुका हमारी पीठ है। कृष्ण जब भी बैठते हैं तो उसके पग उद्धव की गोद में रहता था, नीचे नहीं। गोपियों को उद्धव में कृष्ण की छबि दिखने लगी, उसके पास कृष्ण की महक थी, एक सुगंध थी।

यदि आप सुंदरता चाहते हो, विश्व को सुंदर देखना चाहते हो, तो करो आदर; छोटे से छोटे बच्चे को करो महोब्बत। 'महाभारत' में सात लोग पांडवपक्ष में बचे और तीन कौरवपक्ष में, बाकी नाश! महासंघर्ष हो जाय, महाविनाश हो जाय; व्यास है ये, ये कहते हैं दस बचना ही चाहिए। और महाविनाश में सत्य बच जाता है, उसका विश्व बच जाता है, उसका अस्तित्व बच जाता है। तुम्हारे घर में किसी की डेथ हो जाय, लेकिन उसका कुछ सत्य बच जाय तो रोना नहीं; वो कुछ छोड़ के गया है। स्नेह कभी तुमको अकेला नहीं होने देगा। साधना अकेले में हो सकती है, स्नेह नहीं हो सकता।

तुम मेरे साथ होते हो, कोई दूसरा नहीं होता...

व्यासपीठ की दृष्टि से कहूं तो ये है प्रेमाद्वैत; शंकराचार्य का अद्वैत। स्नेह अकेला नहीं होने देता। लंका में बुद्ध का दांत है; बनारस में तुलसीघाट पर तुलसी की पादुका है। तुलसी जिस नौका से गंगा पार करते थे उस टूटी हुई नौका का एक टुकड़ा है, जो मेरे लिए वंदनीय हो जाता है। बुद्धपुरुष की किसी भी चीज प्रति हमारा आदर है। आज गांधीजी के चश्में की किंमत देखो! जिससे लिखते थे वो कलम की किंमत देखो! उसने जो रेंटिया कांता वो देखो! मूल्यवान बन जाता है। क्योंकि उसके प्रति हमारा आदर है। स्नेह अकेला नहीं होने देता। हरि तुम्हें अकेला नहीं रहने देते। थोड़ी प्रतीक्षा करो; कोई है आपके पास।

प्रेम में जीओ, कभी हार नहीं होगी; प्रेम में जीओ, कभी मौत नहीं होगी; प्रेम में जीओ, कभी उदासी नहीं होगी; प्रेम में जीओ, अमर होओगे। शरीर जीर्ण होगा, आदमी चला जाएगा। प्रेम मानी भक्ति। स्नेह सब वस्तु को ब्युटिफुल कर देता हैं। परवीन शाकिर कहती हैं -

तेरी खुश्बू का पता करती है,
मुझ पे एहसान हवा करती है।
मुझको इस राह पे चलना ही नहीं,
जो मुझे तुझसे जुदा करती है।

महाविनाश में दस चीज क्यों बची? ये बड़ा प्यारा चिंतन है। एक युधिष्ठिर बचा; क्या मतलब? महाविनाश हो जाय, लेकिन आत्मा का धर्म बच जाय; युधिष्ठिर मानी धर्म। अपना स्वभाव, युधिष्ठिर मानी लाओत्से की बोली में अपना ताओ, अपनी निजता, स्वधर्म। युधिष्ठिर बचा, धर्म बच गया। अर्जुन बच गया, क्या मतलब? अर्जुन बचा उसका मतलब पराक्रम बचा; आदमी का पराक्रम बचना चाहिए। 'महावीर बिक्रम बजरंगी, कुमति निवार सुमति के संगी।' ये पराक्रम है। 'महाभारत' में कृष्ण दुर्योधन को कहते हैं, मैं केवल अर्जुन का सारथि ही नहीं हूं, लेकिन दुर्योधन, तू सातवें पाताल के जल में छिप जा, तू कहीं भी छिप जा, कहीं भी चला जा, चौबीस घंटों में तू जहां होगा, वहां अर्जुन का रथ होगा! ये कृष्ण की उद्घोषणा है 'महाभारत' में।

भजन बढ़ाओ, हरिनाम संग-संग बढ़ेगा। यही पुकार ने गजराज को अकेले नहीं होने दिया था; यही पुकार ने द्रौपदी को अकेले नहीं होने दिया था। यही पुकार ने सुरदास को आंख दी थी; हरिनाम। एक चींटी काटती है, तो रोमरोम में अनुभव होता है; एक चींटी का काटना हमें एक क्षण के लिए व्यथित करता है; नारायण-काल काटेगा तो भी मीठा लगेगा। चींटी हरा सकती है, लेकिन हरिनाम जीवन में आया तो महाकाल मीठा लगेगा। महाकाल कौन है? शिव, नारायण, नारायण, नारायण। आप 'महाभारत' पढ़ोगे तो बार-बार आवृत्ति मिलेगी। पांडव को कोई नहीं जीत पाएगा, क्योंकि नारायण उसके साथ है।

युवान भाई-बहन, युवानी में दो प्रकार की निराशा आती है, एक निराशा स्वभावगत होती है; एक निराशा होती है परिस्थितिगत। कई लोगों का स्वभाव ऐसा होता है कि कितनी ही सफलता मिले तो भी वो निराश ही रहता है! ये उनका स्वभाव है। उसका इलाज असंभव है। परिस्थिति आदमी को निराश कर देती है। चाहा था ये और हो गया ये! जाना था कहीं, आ गया कहीं! मिलना था किसी को, मिल गया कोई!

मैं खयाल हूं किसी ओर का, मुझे सोचता कोई ओर है।
मैं नसीब हूं किसी ओर का, मुझे मांगता कोई ओर है।

परिस्थितिगत निराशा में रामकथा आपको अकेला नहीं होने देगी। बचना चाहिए धर्म, बचना चाहिए पुरुषार्थ। कायरता ना हो। तीसरा बचा भीम, भीम शक्ति का प्रतीक है। आत्मबल बचना चाहिए। नकुल सौंदर्य का प्रतीक है। महाविनाश हो जाय, दुनिया की सुंदरता बचनी चाहिए। और सब सुंदर है यदि हमारा आदर है तो। नकुल वरणागी है, सौंदर्य के रसिक है। विश्व की सुंदरता बचनी चाहिए। सहदेव बचना चाहिए, सहदेव ज्ञान का प्रतीक है; बिना पूछे बोलता नहीं, बिना जिज्ञासा बोलना मना है; बाकी ज्ञान है; विश्व का नाश हो जाय, ज्ञान बचे। सात्यकि बचना चाहिए, सात्यकि अर्जुन का शिष्य है। दुनिया खतम हो जाय, किसी आश्रित की विद्या बचनी चाहिए।

कृष्ण बचना चाहिए, कृष्ण तो ब्रह्म है। कृष्ण का अर्थ है प्रेम; राम का अर्थ है सत्य; महादेव का अर्थ है करुणा। कृष्ण-प्रेम अमर रहे। क्यों उसका नाम लेने से अच्छा लगता है? प्रेम बचे। आचार्य बचना चाहिए; कृपाचार्य। व्यक्ति ना रहे, आचार्यत्व बचना चाहिए। सात्यकि- कृतवर्मा दोनों यादव है। एक पांडव पक्षे एक कौरव पक्षे। यदुवंश की एक अच्छाई कृतवर्मा है। सार बचना चाहिए, सारभूत चीज रहनी चाहिए। अश्वत्थामा बचना चाहिए; समाज में जो चिरंजीव तत्त्व है, वो रहना चाहिए। अश्वत्थामा बचे मिन्स चिरंजीविता नित रहनी चाहिए। महाविनाश में सबकुछ लूट जाय, चिंता मत करो। यदि इनमें से कुछ बचा हो, तो आप अकेले नहीं है।

तो, ये महाऔषधि है, उनकी कोई आडअसर नहीं है। सुने वो फ़र्ज़ चुकेगा नहीं, हमारे कर्तव्य पर हमें खड़े करेंगे। तो, तुलसी कहते हैं शेर आक्रमक है, फाड़ डालेगा, शेर का बच्चा है; लेकिन आप प्यार कर सकते हो। रामकथा शेर नहीं है, आक्रमक नहीं है, नहीं करेगी

आक्रमण; 'रामायण' सिंह का बच्चा है, उसको उठाओ, उसको प्यार करो, दुलार करो।

काम कोह कलिमल करिगन के।
केहरि सावक जन मन बन के।।

हमारे मन में जहां काम, क्रोध कलियुग के कुछ दुरित हाथी के समान जुंड़ के जुंड कामनायें, क्रोध हैं, लेकिन हम अकेले नहीं है, हमारे पास शेर का बच्चा है।

मति अनुरूप राम गुन गावउँ।

प्रेम करो तो तुम गाना सीख जाओगे। मीरां ने प्रेम किया, मीरां ने गाया; नानक ने प्रेम किया, नानक ने गाया; कबीर ने प्रेम किया, कबीर ने गाया; सहजो ने प्रेम किया, सहजो ने गाया।

हर दिल जो प्यार करेगा, वो गाना गाएगा।
दीवाना सेंकडों में पहचाना जाएगा।

रामनाम महाऔषध है; हनुमान और 'हनुमानचालीसा' महाऔषध है। टी.बी.की दवा, केन्सर की दवा कळतर में नहीं ली जाती!

फले-फूले कैसे ये गूंगी महोब्बत।
न हम बोलते हैं न वो बोलते हैं।
हजार आफतों से बचे रहते हैं वो,
जो सुनते जियादा हैं, कम बोलते हैं।

- शरफ़ नानपारवी

किसीने पूछा है, 'लीन होवामां एक ज स्थळ उपर बेसीने लीन थवाय के घूमता रहेवुं, एमां लीन थवाय?' अमुक तत्त्वो घुमते दिखाई देते हैं, लेकिन अंदर से स्थिर होते हैं। भमरडा जब बहुत टक्कर ले जाय तब एक ही जगह स्थिर होता है। वैसे रुखड, फकीर हनुमान, घुमते रहते हैं, लेकिन कोई एक केन्द्र पर लीन है। जैसे जलाराम बापा घुमे, इतनी विषम परिस्थिति में अन्नक्षेत्र शुरू किया।

रामनाम में लीन है, देखत सबमें राम।
ताके पद वंदन करूं, जय जय जलाराम।

ये सब घुमते थे; परिव्राजक थे। बंगाल के बाबूल घुमते रहते हैं, लेकिन एक जगह लीन है। हनुमानजी घुमते हैं, रामकाज में तीव्र आतुरता है उसकी। 'रामकाज करिबे को आतुर', लेकिन एक जगह लीन है। लीनता साध्य न बने तो एक जगह बैठने पर भी हम घुमते रहते हैं।

पूछा है, ''गुरु किसको मानना? मन विचलित हो जाता है ऐसे समय में मन के सवालों का जवाब हम किस प्रकार खोजे?'' मैं तो इतना ही कहूंगा कि हनुमानजी को आप गुरु माने और मन की समस्यायें और कुछ चिंता का जवाब ना मिले तो हनुमानजी बोलेंगे नहीं, थोड़ा धैर्य रखो तो कहीं से भी, किसी से थ्रू भी संकेत मिलेगा। उसके लिए धैर्य की जरूरत है। अध्यात्मजगत में इन्स्टन्ट नहीं होता; तुरंत घटना नहीं घटती। उसके लिए प्रतीक्षा जरूरी है। 'भगवद्गीता' में लिखा है, अनेक जन्मों के बाद किसी को ज्ञान की किरण फूटती है। 'रामचरित मानस' में लिखा है, 'जनम जनम मुनि जतन कराई।' तो, धैर्य जरूरी है; तो जवाब मिलेगा। कोई अस्तित्व की इच्छा काम करती है।

'हनुमानचालीसा' का सूत्र, 'है परसिद्ध जगत उजियारा।' हनुमानजी में अग्नितत्त्व, चंद्रतत्त्व, दीपकतत्त्व, मणितत्त्व, सबकुछ है। इसलिए वो जगत को उजियारा दे सकता है। जिसके पास प्रकाश है, वो प्रकाशित कर सकता है। एक हनुमानजी के पास अग्नितत्त्व है। कैसे? 'प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।' तुलसीदासजी वहां हनुमानजी को पावक कहते हैं, अग्नितत्त्व। अग्नि प्रकाश दे सकता है। हनुमानजी

के पास चंद्र तत्त्व है। कैसे? 'जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।' रामचंद्र उनके हृदय में है। अथवा चंद्र के हृदय में प्रभु तुम बैठे हो अथवा तो राम स्वयं चंद्र है। ये प्रकाशतत्त्व किसी न किसी बहाने हनुमानजी में है।

हनुमानजी 'ज्ञानीनां अग्रगण्यं' है, इसलिए ज्ञानदीपक है, वहां भी प्रकाश का संकेत मिलता है; और हनुमानजी भगत-शिरोमणि है। तो वहां भक्तिमणि भी निरंतर स्वयं प्रकाशित है। और आखिर में सूर्य का शिष्य होने के कारण हनुमानजी में सूर्यतत्त्व भी मौजूद है। तो, चंद्रतत्त्व, सूर्यतत्त्व, अग्नितत्त्व, दीपतत्त्व और मणितत्त्व प्रकाश के भिन्न-भिन्न रूप जो 'मानस' में दर्शित है, वो हनुमंत है, इसलिए 'है परसिद्ध जगत उजियारा।' अब आगे की पंक्ति -

साधु संत के तुम रखवारे।
असुर निकंदन राम दुलारे।।
अष्ट सिद्धि नौ निधि के दाता।
अस बर दीन्ह जानकी माता।।
राम रसायन तुम्हारे पासा।
सदा रहो रघुपति के दासा।।

बाप, साधुसंत के तुम रखवाले का सीधा-सादा अर्थ है, साधुसंत के आप रखवाले हैं। तुलसी की इस रहस्यपूर्ण पंक्ति में साधु और संत की परिभाषा में कुछ भेद है। गुरुकृपा से मेरी व्यासपीठ यदि कुछ कहना चाहे तो साधु और संत में पांच भेद है। जिसके पास ये पांच वस्तु हो वो साधु और जिसके पास पांच वस्तु दूसरी न हो वो संत, ऐसा मेरी जिम्मेवारी से बहुत विनम्रता से कहना चाहूंगा। मेरा ऐसा मानना है, थोड़ा जानना भी है, पूरा का पूरा देखा है। ऐसे पांच लक्षणवाले साधु और ऐसी पांच वस्तु जिसमें ना हो ऐसे संत मैंने देखे हैं।

पहले साधु; साधु की व्याख्या करनी बड़ी मुश्किल है; संत की व्याख्या करनी बड़ी मुश्किल है। ये अकथनीय है। फिर भी कुछ बातों से हम कुछ परिचय प्राप्त कर सके इसलिए कुछ महापुरुषों ने अपनी-अपनी बातें रखी। एक, जिस व्यक्ति को देखकर आपको लगे कि ये आदमी एकांतप्रिय है, समझना उसने साधुपना की एक शर्त पूरी की है, एकांतप्रियता। और ऐसे साधु की रखवाली ये करता है हनुमान। साधु मानी सफेद कुर्ता-धोती पहन लिया, तिलक माला रखे, इसमें साधुता आती नहीं; कोई भगवे कपड़ें में भी नहीं। ये अच्छे हैं, महिमावंत है; ये सब को आदर दें। एकांत जिसको प्रिय है वो साधु है। साधु भीड़ का हिस्सा नहीं बन सकता; साधु-संमेलन नहीं हो सकता। आदि शंकराचार्य जगद्गुरु कहते हैं, 'एकान्ते सुखमास्यताम्।' हमारा साधुपना हम क्यों निर्मित नहीं कर पाते? क्योंकि हम एकांत नहीं सह पाते! तमोगुण उठने नहीं देता और रजोगुण कभी आराम नहीं करने देता! तमोगुण निद्रा है; आपको प्रमाद-आलस में रखेगा। एक उम्र हो जाय फिर धीरे-धीरे सत्संग से विवेक प्राप्त किया हो तो रजोगुण कम करो, ऐसा प्रभु से कहो। ये अवसर हरिभजन का है।

अपने बाप को बेटा समझाता है, पिताजी, अब छोड़ो रजोगुण; उम्र हो गई, अब धर्म सेवो। हे पिताजी, लोकधर्म छोड़ो, साधुपुरुष को सेवो। कैसा साधु? जिसको एकांत प्रिय हो। और काम छोड़ना नहीं पड़ेगा, तुम साधु-सेवा में लुब्ध हो जाओगे तो काम छूट जाएगा। कपिल भगवान माँ देवहूति को कहते हैं, जीर्ण न होनेवाली ये आसक्ति है माँ। ये आसक्ति यदि कोई साधु में लग जाय तो मुक्ति का दरवाजा खूल जाय। पिताजी, दूसरे का गुण और दूसरे का दोष का चिंतन बंद कर दो। गुण राग पैदा करेगा और अवगुण द्वेष पैदा करेगा। थोड़ी बने तो दूसरों की सेवा करो। बाकी जहां हरि की कथा चलती हो वहां अमृत का पीना पीया करो, ऐसा 'भागवत' में लिखा है।

जिन्हके श्रवन समुद्र समाना।
कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना।।

दूसरा, भीड में यदि बैठा है तो भी हमें अंदर से समझ में आये कि भीड़ में बैठे हैं फिर भी प्रशांत है। पहला सूत्र एकांत; स्थूल रूप में भीड़ अच्छी नहीं लगती। मौका मिले ही अकेला हो जाय। और भीड में भी हमें एसा महसूस होने लगे ये आदमी प्रशांत है।

शांताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशम्।
विश्वाधारं गगन सदृशं मेघवर्णं शुभांगम्।।

सभी खलबली के बीच में जो प्रशांत लगता है, ऐसा कोई मिल जाय तो साधु है। निज जीवन में एकांतता और समूहजीवन में प्रशांतता। हिन्दी का एक शब्द है 'नितांत', नितांत का अर्थ है पूर्ण। कहते हैं न कि ये वस्तु नितांत आवश्यक है। कुछ अभाव नहीं, नितांत संतुष्टि, नितांत आनंद; एक प्रकार की पूर्णता। वो साधु है जिसको अपने जीवन में कभी ना लगे कि मुझ में कुछ कमी है, ये पाना है; लगे कि हो गई बात, खतम! वो तो समझे, लेकिन निकट आनेवाला भी समझे कि ये आदमी पा गया है। नितांतता साधु का लक्षण है मेरी समझ में।

एकांत, प्रशांत, नितांत; चौथा लक्षण साधु का जल्पांत। प्रास में तो मैं डाल रहा हूं। जल्प एक वाद का नाम है। जिसके जीवन में कभी आपको दिखाई न दे कि ये आदमी वाद-विवाद करेगा। किसके वाद-विवाद? क्या सिद्ध करना है? 'मानस' विवाद नहीं सिखाता, 'मानस' संवाद सिखाता है। साधु किसी की बपौती नहीं है; सबका अधिकार है साधु। वाद-विवाद में कितनी ऊर्जा खत्म होती है! साधु वाद न करे। वाद-विवाद पंडितों का क्षेत्र है।

जो एकांतप्रिय है; भीड़ में प्रशांत है; जिन्होंने पूरा पा लिया है; किसी से वाद में ऊतरता नहीं। आखिर जिन्होंने दीक्षांत कर लिया। मिली थी किसी की दीक्षा। 'छाप-तिलक सब छिनी', करमकांड-विधि सब छूट गया; अब कोई दीक्षा नहीं, कोई बंदगी नहीं। घटना घट गई। मेरा दामन तेरे आगे क्यों ना फैलूं? मेरा अधिकार है। लगे कि अब सभी विधि-विधान छूट गये। कोई एकांतप्रिय, भीड में प्रशांत महसूस हो; लगे कि इस आदमी में कोई अभाव नहीं; लगे कि इतना सबल होते हुए भी जो वाद-विवाद में जाता नहीं और लगे कि सभी विचार खत्म हो गये, वो साधु है और ऐसे साधु की रखवाली ये हनुमान करते हैं।

युवान भाई-बहन, युवानी में दो प्रकार की निराशा आती है, एक निराशा स्वभावगत होती है; एक निराशा होती है परिस्थितिगत। कई लोगों का स्वभाव ऐसा होता है कि कितनी ही सफलता मिले तो भी वो निराश ही रहता है! ये उनका स्वभाव है; उसका इलाज असंभव है। दूसरी परिस्थितिगत निराशा; परिस्थिति आदमी को निराश कर देती है। चाहा था ये और हो गया ये! जाना था कहीं, आ गया कहीं! मिलना था किसी को, मिल गया कोई! परिस्थितिगत निराशा में रामकथा आपको अकेला नहीं होने देगी।

कथा-दर्शन

- 'मानस' विवाद नहीं सिखाता, 'मानस' संवाद सिखाता है।
- रामकथा धर्मसभा नहीं है, प्रयोगशाला है।
- 'हनुमान चालीसा' सिद्ध भी है, शुद्ध भी है।
- 'हनुमानचालीसा' का महाऔषध भवरोग का नाश करता है।
- हनुमानजी में अग्नितत्त्व, चंद्रतत्त्व, दीपकतत्त्व, मणितत्त्व सबकुछ है।
- हनुमानजी का प्रभाव बहिरंग धर्म पर भी है और आंतरिक धर्म पर भी है।
- गुरु व्यक्तित्व भी है और अस्तित्व भी है।
- साधु किसी की बपौती नहीं है; सबका अधिकार है साधु।
- आध्यात्मिक व्यक्ति को अतिशय तर्क का आश्रय नहीं करना चाहिए।
- विश्व को ज्यादा सिद्धों की जरूरत नहीं, शुद्धों की जरूरत है।
- अपने-अपने गुरु और वेदांत के वाक्य में दृढ भरोसा उसीका नाम श्रद्धा।
- विज्ञान से संपृक्त, विज्ञान से आवृत, विज्ञानमय धर्म होना चाहिए।
- जिसके पास प्रकाश है, वो प्रकाशित कर सकता है।
- सनातन वो है जो वर्धमान है, नित्यनूतन है, रोज नया है।
- हमारा मन प्रसन्न रहे ये हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।
- मन प्रसन्न करना है तो उधार उपकरण कम करो।
- प्रभाव बांधेगा, स्वभाव सदा मुक्त रखेगा।
- कर्मयोग अच्छा है; कर्मकांड सब शोक देनेवाला है।
- जीवन में जो जाग्रत रहता है, सावधान रहता है, वो प्रभु की प्रीति का भाजन बन जाता है।
- प्रेम स्वयं मर्यादा टूटने नहीं देता; मर्यादा तोड़ता है मोह, आसक्ति, कामनाएं।
- सत्य कब बोला गया उसकी चिंता मत करो, जो बोला गया वो सत्य होना चाहिए।

जो कभी किसीसे तंत ना करे वह संत

'मानस-हनुमान चालीसा' की सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा हो रही है। एक प्रश्न है कि 'साधु नितांत है, वो हमें कैसे पता लगे?' जैसे कल बात हुई कि नितांत मानी पूर्ण, एकदम भरपूर, अत्यंत आवश्यक। हमें कैसे पता लगे? नज़रवालों को पता लग जाता है; चाहिए नज़र। बहुत सीधी बात कहूं तो आप के सामने एक घड़ा है और ये घड़ा कितना भरा है, कितना खाली है, आप यदि आंखवाले हैं, तो नहीं पता लगता? फिर भी यदि आप निर्णय न ले सके तो घड़े को उंगली से ठपको, बहुत बोले तो समझना खाली है, जरा भी ना बोले तो समझना भरा है। कबीरसा'ब की एक पंक्ति है-

मन मगन भयो अब क्या बोले?

और ये भी पता लग जाता है कि भरे हुए घड़े से और ज्यादा उसमें कुछ ड़ाला जाय तो ओवर हो जाता है, पानी गिरने लगता है। भरे हुए बुद्धपुरुष उभराते हैं। पता लग जाता है। चाहिए नजर, अपनी नजर, उधार नहीं। साधु नितांत है ये पता कैसे लगे ये बात छोड़ो। मैं ये कहूं कि हमें किसी साधु की नितांत जरूरत है। हम सब को किसी ऐसे बुद्धपुरुष की नितांत आवश्यकता है कि कोई ऐसा भरपूर मिल जाय, जो हमारा शोषण ना करे। जो अपने अभाव को पूरने के लिए हमारा शोषण ना करे, उसमें जो ओवर फ्लो हो रहा है इससे हमारे अभावग्रस्त घट को और भर दे। ऐसे बुद्धपुरुष की हमें जरूरत है। सौराष्ट्र में एक पद गाया जाता है-

मिले कोई ऐसा संत फकीर,
पहूंचा दे भव दरिया के तीर।

परवाज़साहब की गज़ल है-

शबभर रहा खयाल में तकिया फ़कीर का ।
दिन भर सुनाऊंगा तुझे किस्सा फ़कीर का।

रातभर जो चिंतन होता है वो सुबह प्रस्तुत हो जाता है। किसी संत की कुटिया का रात भर मेरे में खयाल रहा और अब मैं गज़ल के माध्यम से उसको दिनभर प्रस्तुत करूं।

हिलने लगे हैं तख्त उछलने लगे हैं ताज़,
शाहों ने जब सुना कोई किस्सा फ़कीर का।

हे अल्लाह, हे परमात्मा हमें कोई ऐसे बुद्धपुरुष की नितांत जरूरत है, हमें दे। भगवान हमें मिले ऐसा कभी मत मांगना; भगवान ओलरेडी हम में है, हम है। भगवान को भी जिससे प्रेम करना पड़े ऐसे कोई फकीर की मांग करो। भगवान भी जिसको चाहे ऐसे कोई फकीर, साधु, बुद्धपुरुष की हमें नितांत आवश्यकता है।

पूछा है कि ''बापू, मैं कर्मकांड कराने जाता हूं तो उसके निवारण के लिए आदि-आदि सब बताने पड़ते हैं, तो मैं तो कथा सुनकर आख़िर में यही कहता हूं कि 'हनुमान चालीसा' करो, सब निवारण हो जाएगा; तो ये ठीक कर रहा हूं?'' बहुत ठीक कर रहे हो। मैं 'हनुमान चालीसा' की बातें कर रहा हूं इसलिए नहीं, सरल रास्ता बताओ। उलझन में यजमानों को मत ड़ालो; अथवा कहो, जितना हो पवित्र बानी रखो; जितना हो रूप पवित्र रखो; तेरी लेखनी पवित्र रखो, तेरी जवानी पवित्र रखो। ये चार-पांच चीज पवित्र नहीं होती, तब बाज़ारू बन जाती है। जिसकी तलवार पवित्र नहीं वो बाज़ारू बन जाती है। हर तलवार शिवाजी की नहीं होती। उलझे हुए लोगों को ज्यादा मत उलझाओ, मुक्त रखो। सब को मुक्तता चाहिए। मुक्तता सब का जन्मसिद्ध अधिकार होना चाहिए।

युवान भाई-बहन, लक्झरी जीवन और झूठा जीवन, उसको मेन्टेन करना बहुत पड़ता है। तुम्हारी समृद्धि सद् उपयोगी हो, बाज़ारू ना हो। शरणानंदजी, जो प्रज्ञाचक्षु है, रेल्वे स्टेशन में टिकट लेने जाते थे तो एक मारवाडी गृहस्थ खड़ा था। शरणानंदजी फक्कड! मारवाडी बोले, 'टिकट के पैसे है?' तो बोले, 'नहीं है।' 'तो मुफ्त मुसाफरी करना है?' तो बोले, 'साधु मुक्त मुसाफरी नहीं करता।' 'तो आप की टिकट का पैसा कौन देगा?' तो बोले, 'तू।' 'मैं क्यो दूं?' तो बोले, 'मेरे टिकट जितने पैसे अल्लाह ने मेरे प्रारब्ध में नहीं लिखे; तो, मेरे प्रारब्ध के पैसे तेरी जेब में लिखे हैं, ले ले टिकट।' झूठ को भी बहुत मेन्टेन करना पड़ता है कि कहीं खूल ना जाय! कितना संभालना पड़ता है? और ट्रुथ को मेन्टेन नहीं करना पड़ता; अपने आप मेन्टेन होता है। और एक सादगी को कभी मेन्टेन नहीं करना पड़ता; अपने आप वो मेन्टेन होता है। बेकल उत्साही का शे'र है-

सादगी शृंगार बन गई।
आईनों की हार हो गई।

ऐसे महापुरुषों के साथ रहने में अच्छा लगेगा जिसकी वाणी में सादगी हो, जिसके वर्तन में सादगी हो और जिसके विचारों में सादगी हो; मुझे और तुम्हें उल्झन में फंसाए ना। ये भी दबाव ना करो कि 'हनुमान चालीसा' करो। उसको कहो, हरिनाम लो; तुम्हारे ईष्टदेव को पुकारो। उलझे हुए को ज्यादा कर्मकांड में ना फंसाया जाय। कबीर ने उस पर बहुत प्रहार किए हैं। इतने बड़े लंबे-चौड़े विधिविधान!

तो बाप, सरल बनाया जाय। संग करो जिसकी वाणी-वर्तन में सादगी हो। जो आंटीघूंटी में हमें फंसाये ना। अपने स्वार्थपरक शास्त्र बनाये उसी का ये खेल है!

'अरण्यकांड' में 'रामचरित मानस' में लिखा है-

नर बिबिध कर्म अधर्म बहुमत सोकप्रद सब त्यागहू ।

बिस्वास करि कह दास तुलसी राम पद अनुरागहू ।।

ये बड़ा क्रांतिकारी सूत्र है। अनेक प्रकार के विध-विध कर्मकांड की शृंखला तुलसी कहे तत्त्वत: अधर्म है। कर्मयोग अच्छा है; कर्मकांड सब शोक देनेवाला है। तो कौन-सा सरल उपाय?

बिस्वास करि कह दास तुलसी राम पद अनुरागहू ।

बिस्वास रखकर दीनता, एकदम विनम्र बनकर परम तत्त्व के चरणों में प्रेम कर, तेरी आंटी-घूंटी मिट जाएगी। मुझे बार-बार अपनी बातें कहना ठीक नहीं लगता लेकिन आप मेरे हैं इसलिए मन की बात कहता हूं। हम जिस साधु-परंपरा में आये हैं, वैष्णव साधु-परंपरा में हमारे यहां किसी की मृत्यु होती है तो हम कोई कर्मकांड नहीं करते; कोई भी विधि नहीं करते। योग्य स्थान हो वहां हम समाधि कर देते हैं। न बारमुं, न तेरमुं, न दा'डो! तो, साधु-ब्राह्मण को भोजन कराओ, भजन करो, बात खतम! आप की श्रद्धा तोड़ना नहीं चाहता, लेकिन डरो मत, इतना तो मैं जरूर कहूंगा। भयभीत मत हो।

इक्कीसवीं सदी का विज्ञान अध्यात्मयुग होना चाहिए।-विनोबाजी। विज्ञान से संपृक्त, विज्ञान से आवृत, विज्ञानमय धर्म होना चाहिए। कर्मकांड के अकारण अतिरेक से बचो। देव बैठा है इससे भी ज्यादा आदमी बहुत महत्त्व का है। ईन्सान की उपेक्षा परमात्मा की उपेक्षा है।

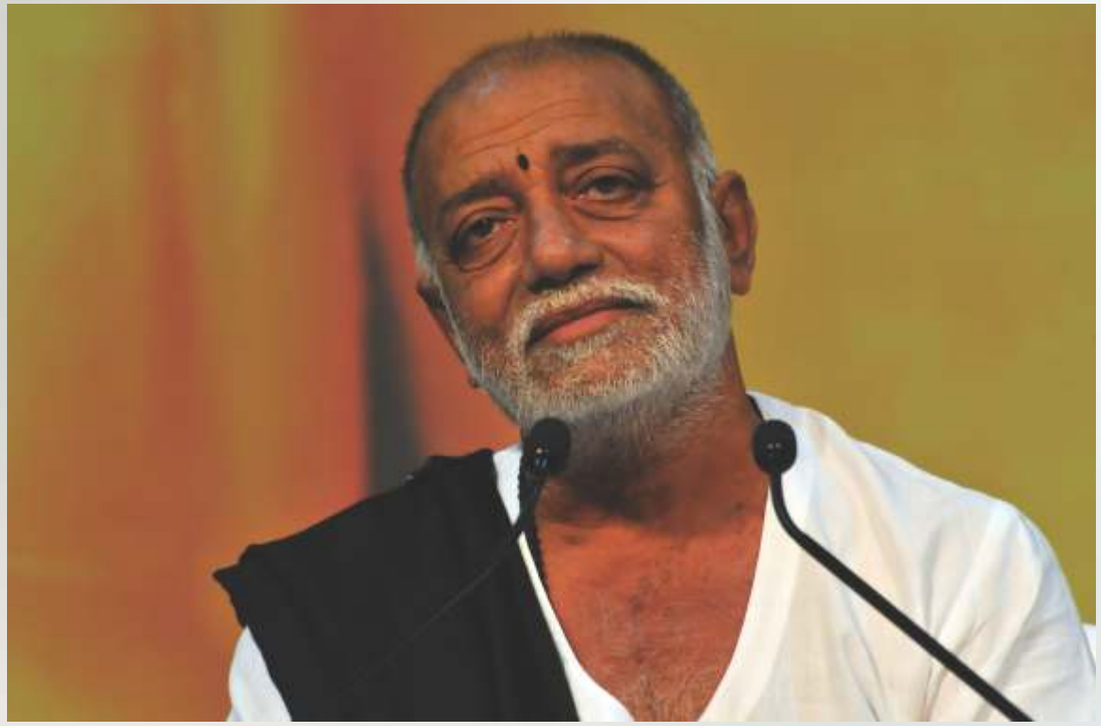

साधु-संत के तुम रखवारे

असुर निकंदन राम दुलारे।

जय हनुमान ज्ञान गुण सागर,

जय कपीस तिहुं लोकउजागर।

कल हमने देखा कि पांच जहां हो उसको हम साधु मान सकते हैं। एकांतप्रिय हो; अतीत के धूने में इंधन जैसे समाप्त होते अग्नि जैसे प्रशांत हो, जो भरपूर है वो साधु; जो वाद-विवाद में समय बरबाद नहीं करता वो साधु और जिसकी सभी विधियां, सभी कर्मजाल, द्वन्द्व खतम हो चुके हैं।

अब संत; गोस्वामीजी 'साधु-संत' दो शब्दप्रयोग करके एक रेखा खिंचना चाहते हैं। यद्यपि आप हिन्दुस्तान में खास कर के उत्तर भारत में जाएंगे तो वहां एक ऐसी मान्यता है; संन्यासी विरक्त महापुरुष में हैं कि जो विरक्त हो, संन्यासी हो, उसको साधु कहते हैं और जो गृहस्थ है, उसको संत कहते हैं। ऐसी एक व्याख्या संन्यासजगत में महापुरुष कहते हैं। ठीक है, और संत करीब-करीब सद्गृहस्थ है अथवा तो पूर्वाश्रम में गृहस्थ रहे हो। तुकाराम को लो, एकनाथ को लो, तुलसीदासजी को लो। कबीरसाहब, जलारामबापा, जितने-जितने, जो स्मरण में आये; संत ज्यादा गृहस्थ दिखते हैं। मूल तो 'सत्' शब्द है। 'सत्' के उपर 'सं' होकर जब कलश चढ़ जाय, तब संतत्व की प्राप्ति होती है।

गुरुकृपा से व्यासपीठ कुछ जिम्मेवारी से कहना चाहती है। ये कौन संत है जिनकी ये रखवाली करता है? एक, तुम्हारे साथ कभी भी तंत न करे उसका नाम संत। आप उसकी बात माने, न माने; आलोचना करे, खंडन करे; कहनेवाला शतप्रतिशत सत्य हो तो भी आप उसकी आलोचना करे तो भी आप के साथ तंत ना करे। एक पंक्ति है-

छोड़ दे, तकदीर से तकरार न कर...

तकदीर से भी तंत ना करो; किसी से तंत ना करो। आप के घर में कोई नया बच्चा आए तो समझो संत आया। संत तिलक लेकर ही आये ऐसा मत समझो। एक नई चेतना आप के घर आये तो एक संत आया समझो। और ध्यान देना, तंत का आख़िर क्रोध में परिणाम आता है। क्रोध कभी-कभी स्वभाव बन जाता है! अल्लाह बचाये। 'रामचरित मानस' में 'अरण्यकांड' में भगवान राम लक्ष्मणजी को बोध करते हुए बोले-

तात तीनि अति प्रबल खल काम क्रोध अरु लोभ ।

मुनि बिग्यान धाम मन करहिं निमिष महुँ छोभ ।।

तुलसीदासजी ने कहा कि ये तीन सठ होते तो सुधारा जा सकता था। सत्संग से सठ को सुधारा जा सकता है; लेकिन खल जो होता है उसको नहीं बदला जा सकता। काम, क्रोध, लोभ सठ होते तो सुधर जाते। क्रोध जब स्वभावगत हो जाता है तब सुधारना मुश्किल है क्योंकि लोग अपने क्रोध को न्यायी ठहराने की कोशिश करते हैं। जहां क्रोध आया, समझना बोध गया!

परखना युवान भाई-बहन, जो कभी जिंदगी में किसी से तंत ना करे वो संत। अल्पकारण, एक छोटे से कारण में इतनी बड़ी आग लगा देते हैं! पति-पत्नी का जीवन क्यों बिगड़ता है? एक छोटा कारण; एक छोटा-सा गलत कदम महा भयंकर परिणाम लाता है। हम और आप क्या? 'मुनि बिग्यान धाम।' बिज्ञान के धाम मुनि लोग, इनके मन में भी ये खल एक निमिष मात्र में क्रोध प्रगट कर सकता है। विकार का ढांकन

खूलते ही बदबू निकलने लगती है। समाज की सब से बड़ी समस्या है क्रोध। बात-बात में क्रोध! क्रोध को तुलसी ने महा खल कहा। लोभ को दो वस्तु का बल मिलता है, ठाकुर कहते हैं, एक ईच्छा का और दंभ का। इससे लोभ प्रबल होता है और काम को केवल नारी, तुलसी कहते हैं काम को केवल स्त्री का रूप प्रबल करता है। कर्कश बोली, किसीने तंत किया, किसीने तर्क किया ये कर्कश बोली से क्रोध को बल मिलता है। विचार करते कुछ श्रेष्ठ मुनि ऐसा कहता है; हे तात, ऐसा मुनि कहते हैं, राम ने कहा।

गुनातीत सचराचर स्वामी ।
राम उमा सब अंतरजामी ।।
क्रोध मनोज लोभ मद माया ।
छूटहिं सकल राम कीं दाया ।।

हे उमा, हे पार्वती! शिव कहते हैं, राम गुणातीत है। 'गुणातीत' शब्द इधर-उधर नहीं लगाया जाता। मेरा राम गुणातीत है। सीता को कौन चुरा ले गया, क्या राम नहीं जानते? राम रोये। लेकिन काम की दीनता दिखाना चाहते थे राम। ये काम, क्रोध, लोभ, मद और माया राम की कृपा होगी तो ही छूटे।

नित्शे का वाक्य है, 'ईश्वर मर चूका है।' God is dead. लेकिन आज का विज्ञान कहता है, पदार्थ मर चुके। सब पदार्थ बेकार है। और तुलसी कहते हैं, राम चैतन्य है, राम सत् है, उसका भजन सत् है।

सत हरि भजनु जगत सब सपना ।

कौन संत? जो कभी किसी से तंत ना करे। आध्यात्मिक व्यक्ति को अतिशय तर्क का आश्रय नहीं करना चाहिए। नारद भी इसी मत में जाते हैं। दूसरा, जिसका कभी अंत ना हो वो संत। हे तात, संत को अनंत समझना। संतत्व शाश्वत है। कौन कहे तुकाराम गये? कौन कहे एकनाथ गये? नामदेव को याद करे, ज्ञानेश्वर को याद करे। नरसिंह मेहता को याद करे, मीरां, सुर, तुलसी को याद करें।

तीसरा, जिसको कभी किसी भी स्थान और आश्रम में महंत बनने की इच्छा ना हो वो संत। महंत होना खराब नहीं है। मेरे निवेदन का कोई गलत अर्थ ना ले। शंकराचार्य भगवान ने 'महंत' शब्द का प्रयोग करके एक महान आत्माओं की ओर संकेत किया है। महंत होना खराब नहीं, लेकिन कैसे भी किसी को हटाकर महंत हो जाना ये संतत्व नहीं है। भजन बिना पद प्राप्त कर लेना ये संतत्व नहीं है।

चौथा सूत्र, जिस व्यक्ति को कोई अंगत ना हो उसका नाम संत। तमे एनी साथ वात करो तो लागे अंगत छे, बीजो वात करे तो ए एने अंगत! साधुने कोई अंगत ना होय। साधुने कोई दूर ना होय, कोई अंगत ना होय। बधानी साथे मारुं एक अंतर होय, माराथी कोई दूर नहीं, कोई नजीक नहीं साहब! अंगत होय एमां रागद्वेष पेदा थाय; अने ए खोटनो धंधो कराय नहीं। सूरज बधामां सरखो वेचातो होय। कोण अंगत सा'ब? ओसमान की भैरवी-

न कहीं से दूर है मंज़िलें, ना कोई करीब की बात है;
जिसे चाहा दर पे बुला लिया, जिसे चाहा अपना बना लिया,
ये बड़े नसीब की बात है ...

उपनिषद में कहा जाता है ब्रह्म दूर से दूर है और निकट से निकट है। संत को हमने ब्रह्मरूप माना है। रामजी कहते हैं, सब मेरे प्रिय है। क्योंकि सब को मैंने उपजाये हैं।

कोई मेरी आंखों से देखे तो समझे कि तुम मेरे क्या हो...

मारुं नव दिवस काम शुं छे? 'रामायण'ना-रामकथाना घोडियामां तमने सुवडावीने चोपाईनां हालरडां गावानुं मारुं काम छे! अशांत जगतमांथी तमने थोडीक पळ शांति मळे तो आ बावानुं काम थोडुं लेखे लागे। मेरे श्रोता आनंद ले ये ही काम है। मुझे देखकर तुम मुस्कुराओ। हंसते रहो; हंस के बोला करो, बुलाया करो। तो बाप, सत्संग हमें खूबसुरत बनाता है।

तो, जिसके जीवन में कोई अंगत नहीं, सब प्रिय, वो संत। पांचवां और अंतिम सूत्र, जिसकी कोई पंगत नहीं वो संत; यद्यपि साधु पंगत में मानता है। पंगत मिन्स जिसका कोई ग्रूप नहीं कि ये हमारा ग्रूप, ये हमारा संप्रदाय! नहीं; ग्रूपों ने समाज को तोड़ ड़ाला है! संत तो सार्वभौम हो। संप्रदाय की अपनी महिमा है, लेकिन दूसरे का विरोध, मूल धारा को तोड़ने की बदवृत्ति! इससे बचे। 'वसुधैव कुटुंबकम्।' जहां भेद नहीं ये संतत्व है। शंकराचार्य जगद्गुरु कहते हैं-

न मृत्युर्नशंका न मे जातिभेद:
पिता नैव मे नैव माता च जन्म ।
न बंधुर्न मित्रं गुरुर्नैव शिष्य:
चिदानंदरूप: शिवोऽहं शिवोऽहम् ।।

जिसकी कोई संकुचित पंगत नहीं है, उसको संत समझना। तो,

साधु संत के तुम रखवारे ।
असुर निंकदन राम दुलारे ।।

'असुर निकंदन।' 'हनुमान चालीसा' में कहते हैं तुलसीजी कि हनुमानजी असुर के निकंदन है। ये 'निकंदन' शब्द मुझे प्रिय नहीं। किसीका निकंदन काढ़ना मेरे स्वभाव में बैठता नहीं! ये भाषा भी ठीक नहीं, ये सोच भी ठीक नहीं। निकंदन का अर्थ यहां क्या? खतम कर दे वो? 'विनाशाय च दुष्कृताम्।' लेकिन 'असुर' शब्द पकड़ोगे तो समाधान हो जाएगा। निकंदन का अर्थ है हटाना। जो असुर है, जो सुर नहीं है, जो बेसूर है उसको हटाना; हारमनी पैदा करना हनुमानजी का काम है। जो हारमनी में विक्षेप करते हैं ऐसे असुर को हटाना। निकंदन मानी नाश नहीं करना, मारना नहीं। हनुमानजी का काम है सेतुबंध, हारमनी पैदा करना। एक दाढ़ सडी जाय तो बीजा दांतने सडो ना लागे एटले सडेली दाढ कढावी नंखाय, ए दांतनुं निकंदन नथी। जो असुर तत्व है, जो कठोरता है जीवन की, जो अक्कडपना है उसको हटाना। एक बसूरा सूर संगीत की हारमनी बिगाड़ता है, इसलिए उसको तोड़ना है।

'वाल्मीकि रामायण' में जानकीजी रामजी को एक बार कहती है कि आप में सब चीज़ अच्छी है लेकिन आप जो हथियार रखते हो वो अच्छे नहीं। एक सुझाव लाती है, 'हम क्या शस्त्रत्याग नहीं कर सकते?' यद्यपि रामने अच्छे तर्क किये कि 'जानकी, बिलग-बिलग प्रवृत्तिवाले लोग यहां रहते हैं, राक्षस लोग सताते हैं, इसलिए मैंने प्रतिज्ञा ली है।' जानकी ने कहा, 'आप ने प्रतिज्ञा ली तब मुझे पूछना था।' ये माँ को विचार आ सकता है।

'रामचरित मानस' में आता है, 'उपलदेह धरी धीर।' 'वाल्मीकि रामायण' में तो रंभा शिला हुई है; अहल्या तो बिलकुल निष्क्रिय पड़ी है। रंभा को ईन्द्र ने भेजा विश्वामित्र की तपस्या भंग करने; और फिर रंभा को शाप मिला कि तू शिला हो जाय!

असुर निकंदन राम दुलारे ।

हनुमानजी को तो राम प्रिय है ही, लेकिन राम के हनुमान दुलारे है। हमें तो परमात्मा प्रिय लगे ही, लेकिन परमात्मा को हम प्रिय लगे। कैसा जीवन हो कि प्रभु के दुलारे बन जाय। यदि ये पांच सूत्र को हम ठीक से आत्मसात् कर सके तो हम भी हनुमंत की तरह रामदुलारे बन सकते हैं।

जो कभी जिंदगी में किसी से तंत ना करे वो संत। आप उसकी बात माने, न माने; आलोचना करे, खंडन करे; तो भी आप के साथ तंत ना करे। दूसरा, जिसका कभी अंत ना हो वो संत। संत को अनंत समझना; संतत्व शाश्वत है। तीसरा, जिसको कभी किसी भी स्थान और आश्रम में महंत बनने की इच्छा ना हो वो संत। महंत होना खराब नहीं, लेकिन कैसे भी किसी को हटाकर महंत हो जाना ये संतत्व नहीं है। चौथा सूत्र, जिस व्यक्ति को कोई अंगत ना हो उसका नाम संत। पांचवां और अंतिम सूत्र, जिसकी कोई पंगत नहीं वो संत; पंगत मिन्स जिसका कोई ग्रूप नहीं कि ये हमारा ग्रूप, ये हमारा संप्रदाय! संत तो सार्वभौम हो। जहां भेद नहीं ये संतत्व है।

मानस-हनुमानचालीसा
।। ७ ।।

हनुमानजी जगत के असुर को सुरीला बनाते हैं

करीब-करीब कुछ सालों से, कितनी साल हुई ख़बर नहीं, साड़े तीन-चार घंटे की कथा तीन प्रवाह में बहती है। एक प्रवाह होता है, जिसमें आप के कुछ प्रश्न आते हैं और प्रश्न मैं समझ सका हूं शास्त्रों से, गुरुकृपा से, अनुभव से, उसका जवाब देने की विनम्र चेष्टा मेरी व्यासपीठ करती है; ये एक प्रवाह है। मध्य में दूसरा प्रवाह फिर उसमें मिलता है, वो है उठाया गया सब्जेक्ट, जैसे कि 'हनुमान चालीसा'; 'मानस' के आधार पर जो स्वाभाविक उठा लेते हैं। आख़िर में जहां तक संभव होता है, मूल कथा के क्रम को थोड़ा-बहुत निभाने की चेष्टा होती है। कुल मिलाकर तीन प्रवाह में कथा का प्रवाह बहता है; ये त्रिवेणी है। इसमें कर्मकथा भी आ जाती है; ज्ञानकथा भी आ जाती है और भक्तिकथा अथवा तो प्रेम कथा भी आ जाती है। और जीव को चाहिए तीन; कर्म भी; ज्ञान, विवेक अथवा समझ और भक्ति, प्रेम, प्रीत। ये कोई सांप्रदायिक वस्तु नहीं है। ये विश्वभर की मांग है। न आप चाहे तो भी कर्म किये बिना हम रह नहीं सकते। हमारी आंतरिक मांग है कि हम विवेक प्राप्त करे। 'बालकांड' में शतरूपा मांगती है, प्रभु हमें विवेक देना, ये हमारी मौलिक मांग है। और तीसरी मांग है हम प्रेम के बिना, भाव के बिना, स्नेह के बिना, दुलार के बिना जी नहीं सकते। ये बहुत महत्त्व की मौलिक मांग है जीव की, भक्ति। इसलिए सहज रूप में कथा तीनों प्रवाह को छूती है।

किसीने पूछा है, 'हनुमानजी साधु-संत के रखवाले हैं, तो सामान्यजन का क्या?' 'साधु-संत के तुम रखवारे', इसका मतलब ये न हो जाय कि ये साधु-संत के ही रक्षक है। यहां एक मधुर मनोरथ है कि साधु-संत के ही रखवाले हैं, ऐसा कहकर हमें साधु और संत होने की प्रेरणा देते हैं। साधु और संत के जो लक्षण व्यासपीठ ने कहे इससे हम परख़ ले वो पर्याप्त नहीं, हमें होना है। और ये इसलिए रखा दिया गया कि साधु-संत के हनुमानजी रक्षक है ताकि हम साधु-संत होने की चेष्टा करें। ये न समझे कि औरों का रक्षक हनुमान नहीं है। हनुमान प्राणवायु है। साधु श्वास ले, शैतान में प्राणवायु नहीं होता? पुण्यात्मा की श्वास चलें, पापात्मा की ना चले? अग्नि साधु को मदद करे, शैतान को

मदद ना करे? जल साधु को जीवन दे, शैतान को न दे? पृथ्वी साधु को रहने दे, असाधु को न रहने दे? और आकाश साधु को रखे अपनी बाहों में, और शैतान को ठुकरा दे?

हनुमानजी पांचों तत्त्व है। हनुमानजी धरती नहीं छोड़ रहे हैं, निरंतर धरती पर रहना चाहते हैं, इसलिए हनुमानजी भूतत्त्व है। श्री हनुमानजी को 'रामचरित मानस' में ज्ञानजल कहा है; हनुमानजी ज्ञान की वर्षा है। इसलिए हनुमानजी जलतत्त्व है। श्री हनुमानजी गगनगामी है, आकाशगामी है, सूर्य तक की पहूंच है, इसलिए हनुमानजी में गगनतत्त्व है। वायु तो वो है ही पवनपुत्र। आकाश में गमन है। और तुलसीदासजी ने हनुमानजी को अग्नि भी कहा है ताकि हनुमानजी अग्नितत्त्व भी है। 'खल बन पावक।' तो ये पांचों तत्त्व श्री हनुमानजी है; ये पांचों तत्त्व यदि सब का रक्षण करता है, इसमें पापात्मा-पुण्यात्मा का भेद नहीं होता। तो, हनुमानजी ये नहीं कर सकते कि साधु की रक्षा करे, असाधु की नहीं करे, ऐसा न समझे। साधु बनने के लिए वस्त्र परिवर्तन जरूरी नहीं है। यद्यपि वस्त्र की एक महिमा है। एक गणवेश भी अपनी जगह महत्त्व रखता है, लेकिन उसमें कोई साधुता समाहित नहीं होती।

मैंने आप के सामने मेरी जिम्मेवारी से जो व्याख्या रखी ये कोई ऐसी व्याख्या तो नहीं है कि जो हम न कर सके। मैंने आप को न बुझनेवाली चिनगारी दी है। अब दायित्व आप का है। थोड़ा अहंकार हटाओ, तंत हटेगा; मूढ़ता छोड़ो। व्यासपीठ और बुद्धपुरुष सब कुछ करे, उसका आश्रय हो जाय; गति होगी लेकिन थोड़ा हम भी चले तो जल्दी पाएंगे। व्यास किसी को वैशाख़ी देना नहीं चाहते। हमारे अनंतपने को पहचानो। क्या है हमारा अनंतपना?

ईस्वर अंस जीव अबिनासी।

चेतन अमल सहज सुखरासी।।

हम अनंत है। महसूस करें; हमें हमारे अनंतपना का बोध हो जाय। परंपरा में हमें पदवी मिले, योग्य है; कबूल करो, निभावो, सद्उपयोग करो लेकिन किसी महंताई और पद प्राप्त करने के लिए हम नेटवर्क ना बनाये। हम असंग रहे; हमारा अंगत पराया ना हो और ग्रूप ना बनाये। हम कायर ना हो जाय कि हम संतत्व को प्राप्त न करें। हमें विकसित होना चाहिए। आदमी रोज नया होना चाहिए, फ्रेश होना चाहिए। हमारा हौसला बढ़ाने की बात है। बाकी हनुमानजी सब के रक्षक है।

किसी ने पूछा है, 'बापू, मन में प्रश्न है, भरोसा से भजन बढ़े कि फिर भजन से भरोसा बढ़े?' ये दो बिलग क्यों करते हो? भरोसा और भजन दो नहीं है। भरोसा ही भजन है। तुम मालाएं करो उसका मूल्य है, लेकिन भरोसा बिलकुल नहीं, तो? और तुम जप ना करो लेकिन तुम्हें भरोसा है कि मेरा कोई रक्षक है। कोई बच्चा मंत्र जपता है क्या? उसे भरोसा है माँ पर कि मैं इसी गोद में हूं, जो मेरा पतन नहीं कर सकती। ये दो नहीं है। भरोसा ही भजन है। भरोसे से भजन बढ़ेगा। वेद में 'श्रद्धा' शब्द आप को बहुत मिलेगा। 'आदौ श्रद्धा'; 'मानस' के मंगलाचरण में भी आप पाते हैं, 'भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।' बिना श्रद्धा आप कभी कोई ठीक कर्म नहीं कर सकते। और कर्म करोगे बिना श्रद्धा से तो फल आप के मनोरथ के अनुकूल नहीं पाओगे। कर्मसाफल्य के लिए बुनियादी है श्रद्धा। 'भगवद्गीता' ने कहा, ज्ञान की प्राप्ति श्रद्धा से होगी; श्रद्धावान ही ज्ञान को प्राप्त करेगा। और भक्ति भी बिना विश्वास नहीं होती। वेद भी कहते हैं, श्रद्धा का स्मरण करो सुबह में, दोपहर में श्रद्धा का स्मरण करो और सायं काल को श्रद्धा का स्मरण करो; क्योंकि श्रद्धा है तो हरि है। पार्वती है, तो शंकर है। सीता है, तो राम है। श्रद्धा मानी भरोसा।

'श्रद्धा' बहुत पवित्र शब्द है, अंधश्रद्धा जरा भी नहीं। एक भाई ने लिखा, 'खोडियार माँ ना परचा कहो!' मुझे परचे में कोई रस नहीं। ये तो आप का रस अखंड रहे इसलिए बात कही। शक्ति की महिमा है। खोडलरूपे भजो, चामुंडारूपे भजो, बहुचररूपे भजो, अंबाजीरूपे भजो कि कालिरूपे भजो। परचे की बात रास न आये। बाप, जीवन एक बड़ा चमत्कार है; श्रद्धाजगत का बहुत बड़ा परिबल है। तो बाप, अंधश्रद्धा नहीं और अश्रद्धा भी नहीं; नगद श्रद्धा आवश्यक है। जैसे-जैसे ऐसा भरोसा बढ़ेगा इससे भजन की मात्रा बढ़ेगी। रस बढ़ेगा।

किसीने पूछा है, ''अंगदान से हिंदु लोग डरते हैं। आपने ये भी कहा कि इक्कीसवीं सदी का धर्म विज्ञान प्रमाणित हो। आज के विज्ञान की जानकारी से एक व्यक्ति जो अंग का डोनेशन करे, कई लोगों को जीवतदान दे सकते हैं। मेरा विनम्र निवेदन है, इस बारे में हमारा मार्गदर्शन करे।'' ये जो शरीर के अवयवों का दान, नेत्रदान आदि उसमें मेरी राय ये है कि स्वेच्छा से हो। व्यक्ति स्वयं करना चाहे और परिवारजन संमत हो, जबरदस्ती नहीं। अभी मेरा एक ईन्टरव्यू हुआ। सब से पूछा होगा कि छः छः महिने तक जो वेन्टिलेटर पर हो, मशीन पर जीवित हो, उसको मरने देना चाहिए कि नहीं मरने देना चाहिए? ईच्छामृत्यु के बारे में पूछा। मैंने कहा, शब्द बड़ा प्यारा है 'ईच्छामृत्यु।' रामकथा में एक ईच्छामृत्यु है कागभुशुंडि। 'महाभारत' में ईच्छामरण है भीष्म। ईच्छामृत्यु की हमारे यहां प्रतिष्ठा है लेकिन ईच्छामृत्यु का ही जवाब है, व्यक्ति की ईच्छा होनी चाहिए और परिवारजन संमत होना चाहिए; व्यक्ति का स्वातंत्र्य बरकरार रहे; आदमी की ईच्छा को सर्वोपरि समझनी चाहिए।

कोईए पूछयुं,'हुं मारी रूद्राक्षनी माळामां तुलसीनो मेरु राखी शकुं?' राखी शकाय; सेतु ही करना है, समन्वय करना है, इसमें बुरी बात क्या है? रूद्राक्ष की माला का सेतु तुलसी का मणका हो सकता है, तो तुलसी की माला में रूद्राक्ष का मेरू हो सकता है। सेतुबंध का विचार बड़ा प्यारा है। आप कर सकते हैं, आप की मौज। बशीर बद्रसा'ब का शे'र है -

खुदा मुझको ऐसी खुदाई न दे,

कि अपने सिवा कुछ दिखाई न दे।

मुझे ऐसी खुदाई ना दे कि मेरे स्वार्थ के सिवा ओर कुछ मुझे दिखाई न दे। आख़िरी शे'र-

खुदा ऐसे अहसास का नाम है,

रहे सामने और दिखाई न दे।

खुदा मिन्स एक ऐसे अहसास का नाम; प्रत्यक्ष हो ना हो, एक अहसास का नाम है; एक श्रद्धा का नाम है। विनोबाजी कहते हैं, 'दिलों को जोड़ने का ही मेरा यज्ञकर्म था।' रामकथा क्या है? दिलों को जोड़ने की शाला है।

सदगुरुना संगे भांगी भवनी भ्रमणा।

जाग्यां सत्य, प्रेम ने करुणा।

अंकित की कविता। सदगुरु याने 'रामायण।' तो बाप, कुछ आप की जिज्ञासा की चर्चा हुई-

साधु संत के तुम रखवारे,

असुर निकंदन राम दुलारे।

श्री हनुमानजी समाज के असुर को सुरीला बनाते हैं। हरिफाई नहीं, हारमनी; स्पर्धा नहीं, श्रद्धा; हनुमानजी सुस्वर में जगत को रखना चाहते हैं। आप राम के दुलारे हैं। दुलार का एक अर्थ होता है वात्सल्य। तीन वस्तु समझो, एक ही तत्त्व है प्रीत, महोब्बत, चाहत, जो कहना चाहो। अवस्थाभेदे इनके तीन नाम हो जाते हैं। अपने से बड़ा, अपने से उम्रवाला बुझर्ग, छोटे पर जो प्यार करे उसको स्नेह कहते हैं, उसको दुलार कहते हैं, उसको वात्सल्य कहते हैं। जैसे माँ बड़ी है तो बच्चे को दुलार करती है; वात्सल्य। 'मानस' में जवाब है -

बड़े सनेही लघुन्ह पर करही।

पर्वत बड़ा है। तिनका-घास ये तो बिलकुल छोटा है, लेकिन पर्वत अपने शिखर पर, अपने मस्तक पर तिनके को रखते हैं; उसको वात्सल्य-स्नेह कहते हैं। अब दोनों में न कोई बड़ा, न कोई छोटा; समवयस्क उसके बीच में जो भाव का आदान-प्रदान होता है, उसको शास्त्र में प्रेम कहते हैं। समवयस्क, एक समान उम्र के दो मित्र एक दूसरे के बीच में जो भाव आदान-प्रदान करे वो दुलार नहीं है, ये प्रेम है, ये महोब्बत है। छोटे पर हुआ तो दुलार, समान के साथ हुआ तो प्रेम। वो ही भाव अपनों से बड़ों की ओर हमारे से शुरू हो जाय उसको भक्ति कहते हैं। बाप बड़ा है तो हम शब्दप्रयोग करते हैं 'पितृभक्ति।' माँ बड़ी है इसलिए हम कहते हैं 'मातृभक्ति।' राष्ट्र हम से बड़ा है इसलिए हम 'राष्ट्रभक्ति' कहते हैं। धर्म हम से बड़ा है इसलिए हम कहते हैं 'धर्मभक्ति।'

श्री हनुमानजी पर राम दुलार करते हैं। 'रामचरित मानस' में कितने पात्रों से राम प्रेम करते हैं; लेकिन दुलार कोई-कोई उपर करते हैं। कितने के सिर पर ठाकुर ने हाथ रखा? कितने को गले लगाया? कुभाव किसी के प्रति नहीं। सब से पहले मैं कह दूं कि भगवान सब से प्रेम करते हैं। लेकिन किसीसे अतिशय प्रेम, किसीसे दुलार, किसीसे भाव, किसीसे प्रीति, किसीसे भक्ति, ख़बर नहीं एक ही शब्द का क्या-क्या वर्गीकरण किया!

जनकसुता जग जननि जानकी ।
अतिसय प्रिय करुनानिधान की ।।

जानकीजी रामजी को अत्यंत प्रिय है। हनुमान?

सुनु कपि जियँ मानसि जनि ऊना ।
तैं मम प्रिय लछिमन ते दूना ।।

लछिमन से भी दुगुना तू मुझे प्रिय है।

तुम्ह मम सखा भरत सम भ्राता।
सदा रहेहु पुर आवत जाता।।

ये किरात, भील, निषाद, छोटे लोग सब प्रभु को कितने प्रिय है? और असुर भी। तो, सब के साथ प्रभु प्रेम करते हैं। भगवान को सब प्रिय हैं।

मुझे पांच पात्र कहने थे-सीताजी, विभीषण, भरत, लक्ष्मण और हनुमानजी अथवा शंकर। पांच के

एक-एक प्रधान सूत्र उठाओ, यदि ये सूत्र हम गुरुकृपा से अपने उजाले में थोड़ा कर सके तो ये तत्त्व, ये परमतत्त्व राम हनुमान की तरह हमें दुलार कर सकता है। जानकी को प्रभु अतिशय प्रिय कहते हैं। एक ही लक्षण जानकीजी से सहनशीलता। सहन करने की जिसकी तैयारी हो वो राम का दुलारा बन जाय। और ये सब हम कर सकते हैं। निंदा भी सहन कर लो, प्रशंसा भी सहन कर लो। शंकर ने जहर पिया। हमारे जीवन में आती विषम परिस्थिति को 'मानस' में संतों ने विष बताया। आदमी की परिस्थिति बदलती रहती है जीवन में; और वो ही को पी जाना वो विष है। जो जहर पीएगा, दूसरों को अमृत बांटेगा; वो हरि को प्रिय होगा।

तीसरा सूत्र, विभीषण की शरणागति। एक असुर शरणागत होता है तो मूल्य बढ़ जाता है। जिसकी दृढ़ शरणागति होगी उसको ठाकुर दुलार करेगा; अखंड शरणागति। शरणागति एक ही बार होती है और एक की ही होती है। एक खेत में पांच-पांच फूट के गड्ढे बनाने से पानी नहीं निकलता। एक ही जगह पचास-सो फूट का गड्ढा कर दो, पानी निकल जाएगा। शरणागति इधर-उधर भटकती नहीं, बस! ऐसे की शरण में रहना मेरे भाई-बहन, जो स्वीकारक भी हो और उद्धारक भी हो; केवल विचारक नहीं। भगवान कृष्ण जैसा उस काल में कोई विचारक नहीं हुआ; लेकिन ये विचारक स्वीकारक भी है, उद्धारक भी है। हम तेरे शरण में है, ये है शरणागति। जानकी की सहनशीलता, शंकर का विषपान अमृतत्त्व देने के लिए राम को प्रियता का कारण बना। विभीषण की शरणागति रामप्रियता का कारण बनी। और लक्ष्मण की जागृति प्रियता का कारण बनी। जीवन में जो जाग्रत रहता है, सावधान रहता है, वो प्रभु की प्रीति का भाजन बन जाता है। पांचवां सूत्र भरत, परमसंत का निरुपण करने लिए।

सिय राम प्रेम पियूष पूरन होत जनमु न भरत को।
मुनि मन अगम जम नियम सम दम बिषम ब्रत आचरत को।।

समस्त भाव, पूर्णत: त्याग, पूर्णत: वैराग ये भरतजी के चरित्र का विकसित पक्ष है। दिन-ब-दिन विकसित पक्ष, ऐसा हमारे जीवन में घटे, तो-

असुर निकंदन राम दुलारे ।
अष्ट सिद्धि नौ निधि के दाता ।
अस बर दिन्ह जानकी माता ।।

माँ जानकी ने हनुमानजी को ऐसा वरदान दिया है कि हे हनुमंत, मैं तुझे ऐसा बल, ऐसा वरदान की शक्ति देती हूं कि तेरी शरण में आएगा उसको अष्टसिद्धि और नवनिधि के दाता सिद्ध होगे। हनुमानजी है अष्टसिद्ध और नवनिधि के दाता। निधि याने ख़जाना। सिद्धियां रजोगुणी लगता है, इसलिए उसमें नहीं जाता। विश्व को ज्यादा सिद्धों की जरूरत नहीं, शुद्धों की जरूरत है।

मेरी व्यासपीठ की दृष्टि में क्या है सिद्धि और निधि? पहली सिद्धि है वाक्सिद्धि। कई लोगों के पास वाणी की सिद्धि होती है। फिर मेरे शब्द में आउं कि उसको भी सिद्धि ना कहे, वाक्शुद्धि कहे। केवल व्याकरण द्वारा ही शुद्धि नहीं। कहीं लोगों की वाणी इतनी तेजस्वी होती है कि सिद्ध वाणी। दूसरी मनोरथसिद्धि, जो संकल्प करे, वो सिद्ध, जिसको संकल्पसिद्धि कहते हैं। गुरु आश्रित के मनोरथ सफल करने तैयार रहता है। तीसरी साधनसिद्धि। गांधीजी साधनशुद्धि के आग्रही थे। 'मानस' में है -

साधनसिद्धि रामपद देहु।

कई साधक के साधन ऐसे होते हैं कि सिद्धि ही हो, बस! यज्ञ किया, सिद्ध; जप किया, सिद्ध; आसन किया, सिद्ध; एक आसनसिद्धि भी है। चौथी है मंत्रसिद्धि। कई लोग मंत्रसिद्ध करते हैं। उसमें तांत्रिक मंत्रों की भरमार है, उसमें हम न जाय; लेकिन मंत्रसिद्धि। पांचवी सिद्धि का नाम है योगसिद्धि। छठ्ठी सिद्धि का नाम है कार्यसिद्धि। कोई कार्य उठायें। हनुमानजी कार्य के लिए निकलते हैं, रामकार्य के लिए निकलते हैं। बहुत हर्षित है, कार्यसिद्धि होती है। भक्तिमारग का शब्द है 'रससिद्धि।' भरद्वाज के आश्रम में इस सिद्धि पर संकेत है। और आठवीं सिद्धि का नाम है शास्त्रसिद्धि। कई लोगों के हाथ में शास्त्रसिद्धि होती है। खेल-खेल में शास्त्र के सूत्रों को वो बांट देते हैं। उसको शास्त्रसिद्धि कहते हैं। ये आठ सिद्धि है।

नौ प्रकार की निधि। ये सब 'मानस' से निकाली हुई है। एक निधि है करुणा। जिसके पास करुणा है, वो गरीब नहीं है, वो निधिवान है।

करुनानिधि मन दीख बिचारी।
उर अंकुरेउ गरब तरु भारी।।

दूसरी निधि का नाम विद्यानिधि है। 'बिद्यानिधि कहुँ बिद्या दीन्ही।' राम को विश्वामित्र ने विद्या प्रदान की है। तीसरा गुणनिधि।

अजर अमर गुननिधि सुत होहू।
करहुँ बहुतरघुनायक छोहू।।

शीलनिधि, ये तो पात्र ही है। शील का समुद्र, शील का ख़ज़ाना। बलनिधि, बाहुबिशाल; बल का निधान। विवेकनिधि; 'को विवेकनिधि बल भी दिन्हि सके उपदेश।' ज्ञाननिधि, 'श्रोता वक्ता ग्याननिधि।' वैरागनिधि, साक्षात् हनुमानजी वैरागनिधि है, वैराग स्वरूप है। और छबिनिधि, परमात्मा के रूप की निधि, ये नौ प्रकार की निधि है।

थोड़ा कथा का क्रम। भगवान राम का अयोध्या में प्रागट्य हुआ। वैसे कैकेयी माँ ने जन्म दिया भरत को। सुमित्रा ने शत्रुघ्न और लक्ष्मण को जन्म दिया। अयोध्या में आनंद ही आनंद। नामकरणसंस्कार वशिष्टजी ने किया। आराम दे वो राम। सब को भर दे वो भरत। जिसके सिमरन से शत्रुता मिट जाय वो शत्रुघ्न और समस्त लक्षण का धाम, सब का आधार उसका नाम लक्ष्मण। चारों भाई कुमार हुए। वशिष्ठजी के गुरुकुल में विद्या संपन्न हुई। एक दिन विश्वामित्रजी अयोध्या पधारे। दशरथजी से राम की मांग की। गुरु वसिष्ठजी के कहनेपर दशरथजी राम-लक्ष्मण विश्वामित्र को सोंपते हैं।

पदयात्रा शुरू होती है। रास्ते में ताड़का को निर्वाण दे दिया। मारीच को बिना फने का बाण मारकर भगवान ने समुद्र के तट पर फेंक दिया और सुबाहु को अग्नि के बाण से जलाकर भस्म किया। कुछ दिन विश्वामित्र के आश्रम में रहे। उसके बाद विश्वामित्र के कहने पर धनुषयज्ञ देखने के लिए जनकपुर की यात्रा करते हैं। रास्ते में बिलकुल अचेतन पड़ी अहल्या; विश्वामित्र के कहने पर प्रभु अहल्या का उद्धार करते हैं। स्वीकार भी हुआ और उद्धार भी हुआ। प्रभु पतितपावन हुए। गंगास्नान किया। प्रभु जनकपुर पहूंचे। जनकराज को ख़बर मिली। स्वागत किया और राम-लक्ष्मण को देखकर विशेष विदेही हो गये! हे महामुनि, ये कौन है? सांकेतिक भाषा में जवाब दिया, ये वो है समस्त जगत में, जड़-चेतन में सब को प्रिय लगते हैं। ये दशरथपुत्र है। 'सुंदर भवन' में निवास दिया।

सायंकाल में नगरदर्शन के लिए राम-लक्ष्मण जाते हैं और पूरी नगरी प्रभु के रूप में डूब जाती है। दूसरे दिन सुबह गुरुपूजा के पुष्प लेने के लिए राम-लक्ष्मण पुष्पवाटिका में जाते हैं। जहां जानकी और राम का प्रथम मिलन होता है। जानकीजी सखियों संग आती है। राम की छबि का दर्शन करती है और फिर भवानी के मंदिर में जाकर गौरी की स्तुति करती है। पार्वतीजी ने आशीर्वाद दिया कि जिस सांवरे में तेरा मन डूब गया है, वो राम तुझे मिलेगा। जानकी सखीओं के संग अपने घर आई। राम-लक्ष्मण पुष्प लेकर गुरु के पास आये, गुरु ने आशीर्वाद दिया।

दूसरे दिन धनुषयज्ञ की बात। राम-लक्ष्मण को लेकर विश्वामित्रजी धनुषयज्ञ में आते हैं। एक के बाद एक राजा धनुष भंग करने के असफल प्रयत्न में लगे! आख़िर में भगवान राम खड़े होते हैं और क्षण के मध्य भाग में धनुष तोड़ देते हैं। जयजयकार हुआ। जानकीजी आई, जयमाला पहनाई। परशुराम महाराज पधारे। आख़िर में जयजयकार करते हुए परशुराम विदा हो गये।

महाराज दशरथजी बारात लेकर मिथिला पहुंचे। और मागसर शुक्ल पक्ष की तिथि, गोरज बेला। वेदविधि से विवाह संपन्न होने लगे। वशिष्ठजी ने जनकजी को कहा, 'आप की बेटी उर्मिला और आप के छोटे भाई की बेटी श्रुतकीर्ति और मांडवी को संवार के ले आओ, हमारे तीनों राजकुमार के साथ इन तीनों का ब्याह हो जाय।' एक ही मंडप में चारों का ब्याह संपन्न हुआ। उर्मिला लक्ष्मण को समर्पित; मांडवी संत भरत को और श्रुतकीर्ति शत्रुघ्न महाराज को। बारात अयोध्या पहुंचती है। प्रभु ब्याह के आये बाद आनंद ही आनंद अयोध्या में होने लगा। मेहमान लोग विदा हुए। आख़िर में विश्वामित्र विदा लेते हैं तब महाराज दशरथ सपरिवार विश्वामित्र के चरणों में प्रणाम करते हैं -

नाथ सकल संपदा तुम्हारी ।
मैं सेवकु समेत सुत नारी ।।

आप को साधना में अवसर मिले तो हमें दर्शन देते रहिएगा। सजलनेत्र एक संत की विदाई हुई। अवध में जानकीजी आई है तब से सुख-समृद्धि और बढ़ी है। 'बालकांड' समाप्त होता है।

किसीने पूछा है, 'हनुमानजी साधु-संत के रखवाले हैं, तो सामान्यजन का क्या?' 'साधु-संत के तुम रखवारे', इसका मतलब ये न हो जाय कि ये साधु-संत के ही रक्षक है। यहां साधु-संत के रखवाले हैं, ऐसा कहकर हमें साधु और संत होने की प्रेरणा देते हैं। ये न समझे कि औरों का रक्षक हनुमान नहीं है। हनुमान प्राणवायु है। साधु श्वास ले, शैतान में प्राणवायु नहीं होता? अग्नि साधु को मदद करे, शैतान को मदद ना करे? जल साधु को जीवन दे, शैतान को न दे? पृथ्वी साधु को रहने दे, असाधु को न रहने दे? और आकाश साधु को रखे अपनी बाहों में और शैतान को ठुकरा दे? हनुमानजी पांचों तत्त्व है। ये पांचों तत्त्व यदि सब का रक्षण करता है, तो इसमें पापात्मा-पुण्यात्मा का भेद नहीं होता।

मानस-हनुमानचालीसा
॥ ८ ॥

रामकथा सामूहिक साधना है

एक प्रश्न है, ''बापू, 'सोऽहम्' मंत्रनो अर्थ समजवो छे. आ मंत्रनो फक्त ऋषि जप करी शके के सर्व जप करी शके?' मैं इतना ही कहूंगा कि ये मंत्र आप को जिसने दिया हो, कृपया उसको ही पूछ लीजिए। 'ॐ सोऽहम्' को मंत्र भी कहा जा सकता है। 'ॐ' को किसी भी शब्दब्रह्म के आगे लगा देने से मंत्र का रूप हम देते हैं। 'सोऽहम्' वो मंत्र भी है, लेकिन 'रामचरित मानस' की परिभाषा में 'सोऽहम्' अखंड वृत्ति का नाम है। 'मैं वो ही हूं, वो ही हूं;' 'मैं ब्रह्म हूं', उस अखंड वृत्ति को 'मानस' 'सोऽहम्' कहता है। और दूसरी बात, जरूर जिज्ञासा करे, मुझे भी अच्छा लगता है, मुझे कुछ नया बोलने का मौका आप दे देते हैं। लेकिन हरेक प्रश्न का उत्तर मेरे पास हो, ऐसा आप मत मानिएगा, क्योंकि मेरी भी मर्यादा है। गुरुकृपा से और मेरी समझ में जो आता है वो मैं कहूं, न समझे वो ना कहूं। लेकिन एक बात आप समझ लीजिए कि कोई भी उत्तर मिलने से प्रश्न समाप्त नहीं होता। प्रश्न समाप्त तभी होता है कि प्रश्न उठे ही ना। ये अध्यात्म की अंतिम परिणति है। इस बात को मैं गुरुकृपा से जानता हूं। आप मेरे हैं इसलिए सार्वजनिक करता हूं। चाहे कोई भी आप को उत्तर दे, समाधान होगा; लेकिन समाधान ये आख़री पडाव नहीं है।

प्रश्न का उत्तर बाहर से मिलता ही नहीं। आप गलत अर्थ न करे तो मैं कहना चाहूंगा, तुम्हारे और मेरे दिल में उठनेवाली जिज्ञासा का समाधान शास्त्र से भी नहीं मिलेगा, सिद्धांत से भी नहीं मिलेगा। ये सब बाहरी उपाय है, थोड़े-बहुत जरूरी भी है। तुम्हारे अंदर बैठे गुरु ही इस सवाल का जवाब देगा। और शंकराचार्य भगवान कहते हैं कि कोई सुंदर वीणा बजाये तो उसको कोई सरपाव मिल सकता है, प्रसाद मिल सकता है, भेंट मिल सकती है, लेकिन साम्राज्य नहीं मिल सकता; वैसे अच्छा बोलने से थोड़ी प्रशंसा मिल जाएगी, खुद को भी थोड़ा रस मिलेगा लेकिन आत्मतत्त्व नहीं मिलेगा। ये सनातनी सत्य है। मैंने तीन-चार कथा से बोलना शुरू किया है कि कभी-कभी मैं खुद अपने बारे में सोचता हूं कि मैं ये बोले जा रहा हूं, ये क्यांक हुं बणगां तो नथी फूंकतो ने? ये मेरी पीड़ा कहो, मेरा खुद का प्रश्न कहो, ये केवल शब्द के खेल तो नहीं है क्या? फिर भी ये मेरी वाणी से आप की पूजा है। ये मेरे शब्दों से आप की आराधना है।

अच्छा बोलना, रस लेना, रस देना, अच्छा सुनना, ये भी काम है। इस काम का शास्त्र में नाम है जलगत काम। काम तीन प्रकार के होते हैं। एक काम है भूमिगत काम। दूसरा काम है जलगत काम और तीसरा काम है गगनगतकाम। भूमिगत काम उसको कहते हैं जो स्थूल है। जल में ये फायदा है कि जल जल होते हुए भी रस है। और गगनगत काम बिलकुल शिखर का है। तो, हम जैसों के जीवन में पृथ्वीगत काम होता है; जिसमें कुछ स्थूलता केन्द्र में होती है, देह प्रधानता होती है। भूमिगत काम में आदमी मूर्छा का भोग बनता है, बेहोशी आती है। अच्छा है ये जलगत काम, जिसमें रस है। जलगत काम मूर्छा नहीं देता, मग्नता देता है। पृथ्वीगत काम मूर्छित बना देता है, आक्रमक बनाता है। जैसे कोई अच्छा गाये तो हम दाद देते हैं। ये रसवाला काम है। भगवती श्रुति ने परमात्मा को इसलिए रस कहा है। शायद भारतीय प्रज्ञा ने, भारतीय मनीषा ने ही ऐसा कहा है कि परमात्मा रस है। परमात्मा चैतन्य है, इससे भी उंचा शब्द है, परमात्मा रस है। कृष्ण को हम रासरासेश्वर कहते हैं। शंकर ध्यान रस में डूबे रहते हैं। सत्संग क्यों है? धीरे-धीरे हम लिफ्ट हो; धीरे-धीरे हम उपर उठे। उसके बाद जिस काम का वर्णन होता है वो गगनगत काम है। ये आदमी को मूर्छित नहीं करता, मग्न भी नहीं होने देता, उदासीन बना देता है; एक उंचाई पर ले जाता है। न वक्ता का प्रभाव आप को बांधे, न आप की तन्मयता वक्ता को आप के प्रति आकर्षित करे। दोनों अपनी-अपनी जगह उदासीन रहे; वर्ना ये एक खूबसूरत बंधन हो जाएगा।

प्रभाव देखकर पूजा ही होती है, सेवा कभी नहीं होती; सेवा तो स्वभाव देखकर होती है। रामजी कहते हैं, 'मित्र, मेरा स्वभाव मैं तुम्हें बताउं; गिने चुने लोग मेरे स्वभाव से परिचित है। एक कागभुशुंडि मेरा स्वभाव जानता है; एक शंकर मेरा स्वभाव जानता है; और गिरिजा भी जानती है।' एक व्यक्ति के प्रभाव में आप आये, हो सकता है दूसरे का प्रभाव उससे ज्यादा प्रभावक है, तो आप यहां से वहीं चले जाओगे! आप प्रभाव आधीन हो, प्रभाव ने आप के चित्त को पकड़ा है। आप का चित्त स्वतंत्र नहीं रहा है। प्रभाव के द्वारा उसको संचालित किया जा रहा है। स्वभाव का बहुत बड़ा काम है। अपने बुद्धपुरुषों के बारे में सोचो, नहीं लगता कि हमारे बुद्धपुरुष जैसा स्वभाव कहीं देखा नहीं! क्या स्वभाव है! प्रभाव नाशवंत है, स्वभाव शाश्वत है।

हमारे भारतीय वैज्ञानिकों स्वभाव क्या है, ये परंपरागत है, जिन्स में है, इस पर खोज कर रहे हैं। किसी के स्वभाव से विपरीत उसके पास करवाना ये हिंसा है, अपराध है। खलील जिब्रान ने बहुत सुंदर कहा है कि तुम्हारे बच्चें तुम्हारे नहीं हैं, तुम्हारे थ्रू दुनिया में आये हैं। तुम निमित्त बने हो। इससे पहले तुलसी ने कहा है-

जनम हेतु सब कह पितु माता ।

हमारे माँ-बाप हमारे जन्म का कारण है। उनके थ्रू हम आये हैं। उसके स्वभाव के तुम निर्माता नहीं हो। सद्गुरु दो काम करता है, वो हमारे मन का ज्ञाता भी है और हमारे मन का निर्माता भी है। लोग कहते हैं, मनोविज्ञान कहता है, ये माँ-बाप जैसा स्वभाव बच्चे में उतरता है। वो भी कोई जल्दी हां कहने जैसा निर्णय मुझे नहीं लगता। उत्तम माँ-बाप के घर बिलकुल अधम संतान पैदा हुए हैं! कहां गया स्वभाव? कहां गया माँ-बाप का वारसा? अधम माँ-बाप होते भी अच्छे संतान पैदा होते है, हिरण्यकशिपु। ये निर्णय करना मुश्किल है। थोड़ा कुछ आता है। माँ-बाप की आवाज़ आती है, शक्ल-सुरत, कुछ रोग। स्वभाव क्या?

स्वभाव समझना मुश्किल है। स्वभाव को परिवर्तित करना मुश्किल भी पड़ता है। लेकिन सत्संग से फ़र्क जरूर होता है। कहते हैं, जन्म-जन्मांतर का चित्त स्वभाव बन जाता है। चित्त में पड़े संस्कार वो स्वभाव बन जाता है। इसीलिए जरूरत हैं किसी बुद्धपुरुष के पास रहने की। हरिनामका स्वभाव। तो, ये जो स्वाभाविक घटना घट जाय उसके लिए सत्संग है। श्रोता-वक्ता दोनों उदासीन रहे, गगनगत हो जाय; वर्ना किसी की वाणी में, किसी के प्रभाव में, किसी की मुस्कराहट में, किसी की बोलने की अदा में, किसी की देखने की अदा में आबद्ध होने में देर नहीं लगती और एक नया ओर बंधन हो जाता है। देखो स्वभाव। प्रभाव बांधेगा, स्वभाव सदा मुक्त रखेगा।

मेरे युवान भाई-बहनों, मेरे श्रावक भाई-बहनों को ये कहूं कि अपने स्वभाव को प्राप्त करने के लिए नये छ दर्शन करने पड़ेंगे। यदि आप करना चाहो तो कहूं। पहला दर्शन, पांच मिनट निकाल के श्रोता खुद का दर्शन करे। ठाकोरजी का दर्शन करो ही करो, लेकिन स्वदर्शन। रामकथा ओर कुछ नहीं है, सामूहिक साधना है। करे स्वदर्शन, फायदा होगा। दूसरा दर्शन है सत्दर्शन। दूसरे को देखकर उसमें अच्छाई कितनी है, वो ही देखो, बुराई न देखो। फिर बुद्ध के दर्शन का प्रयोग करूं, सम्यक्दर्शन, यथायोग्य दर्शन। चौथा दर्शन है समदर्शन। पंडित वो है जो समदर्शी हो। एक दर्शन का नाम है छायादर्शन। हम अपनी जिंदगी को छाया में नांपते हैं। छाया में अपनी प्रतिभा नहीं नांपी जाती। कथा सुनते-सुनते ये तबक्का आना चाहिए मेरे श्रोताओं को। थोड़ा प्रयोग किया जाय; सोचो। तो बाप, स्वदर्शन, सत्दर्शन, सम्यक्दर्शन, समदर्शन, छायादर्शन, सिद्धदर्शन। थोड़ा प्रयोग करो, आनंद आएगा। दनकौरीसाहब कहते हैं-

शायरी तो सिर्फ बहाना है।

असली मक्सद तुझे रिझाना है।

तो, कोई भी उत्तर बाहर से आएंगे, वो समाधान दे सकता है, अंतिम परिणति नहीं दे सकता। वो तो तब आती है, जब अंदर से आये। 'ॐ सोऽहम्', ये बहुत कठिन महामंत्र है। ऋग्वेद का एक मंत्र है; उसका हम उच्चारण करें।

श्रद्धां प्रातर्हवामहे श्रद्धां मध्यंदिनं परि ।

श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः ।।

ये ऋग्वेद का मंत्र है। ऋषि कहता है, सुबह में हरि का स्मरण करने से पहले हम श्रद्धा का स्मरण करें; दोपहर को हम श्रद्धा का स्मरण करें; सायंकाल को हम श्रद्धा का स्मरण करें। हमारी श्रद्धा बढ़े, हमारी श्रद्धा पुष्ट हो। और श्रद्धा किम्? श्रद्धा मानी क्या? अपने-अपने गुरु और वेदांत के वाक्य में दृढ भरोसा उसीका नाम श्रद्धा। तो बाप,

अष्ट सिद्धि नव निधि के दाता ।
अस बर दिन्ह जानकी माता ।।

राम रसायन तुम्हरे पासा ।
सदा रहो रघुपति के दासा ।।

आप अष्ट सिद्धि और नव निधि के दाता होंगे, ऐसा वरदान जानकी माता ने आप को दिया। जानकीजी ने 'मानस' में 'सुंदरकांड' में जो वरदान दिया है,वहां अष्टसिद्धि नव निधि का जिक्र नहीं है। वहां तो जिक्र है-

अजर अमर गुननिधि सुत होहू ।
करहुँ बहुत रघुनायक छोहू ।।

जहां जानकीजी हनुमानजी को वरदान देती है, वहां अष्ट सिद्धि नव निधि का उल्लेख नहीं है, लेकिन सांकेतिक रूप में उल्लेख है, अजर और अमर। अजर मानी अष्ट सिद्धि और अमर मानी नव निधि। सिद्धि ऐसी होनी चाहिए जो कभी जीर्ण-शीर्ण ना हो। कल वाक्सिद्धि, मनोरथसिद्धि, साधनसिद्धि, मंत्रसिद्धि, योगसिद्धि, कार्यसिद्धि, रससिद्धि और शास्त्रसिद्धि कही। लेकिन ये आठों सिद्धि में एक ख़तरा है। इनमें से किसी भी प्रकार की सिद्धि किसी के पास आ गई और उसको इस सिद्धि का अहंकार आया तो सिद्धि जीर्ण हो जाएगी; सिद्धि की बलवत्ता कम हो जाएगी। माँ जानकी ने हनुमंत को ऐसी सिद्धि दी कि तेरी सिद्धि अजर हो; तेरी सिद्धि को कभी बूढ़ापा ना लगे। वाणी की सिद्धि हस्तांतरित करना, वर्ना जर्जरित हो जाएगी। ये आठों सिद्धि में अहंकार का ख़तरा है। कोई अच्छा बोले तो समझना, अस्तित्व की व्यवस्था है। अहंकार आया तो गया! आठोंआठ सिद्धि में अहंकार का ख़तरा है।

मनोरथसिद्धि; अपने मनोरथ सफल हो गए, तो प्रभु की कृपा समझना; अहंकार मत करना। सीताजी ने हनुमानजी को आशीर्वाद तो दिया, लेकिन कहा क्या? 'दाता।' 'मैं रिद्धि सिद्धि देती हूं, उसका मालिक मत बनना, दाता बनना।' ये मूल रहस्य है। हमें और आप के पास परमात्मादत्त कोई विशेषता हो, तो उसकी कंजूसी और उसके मालिक मत बनना, उसका वितरण करना। मैंने तुझे दिया है, तो किसीको देना। जिसके पास जो हो, कोई कला, कोई विद्या, संगीत है, गायन है, कविता है। जगत में कोई भी कला हो, धन हो, वैभव हो; दूसरे को दे तब वो अजर रहेंगे; तब वो जीर्ण-शीर्ण नहीं होंगे। कवि त्रापजकर की कविता है कि-

सुकाणां रे हाड पाडोशीनां,
बाळने मोढे कांइक तुं खीचडी नाखतो जाजे;
आप्युं होय तो आपतो जाजे।

नव निधि; एक प्रकार की नव भक्ति वही हमारी नव निधि। आप कथा सुनते हो, ये आप का ख़ज़ाना है; ये आप की दौलत है; आप की निधि है।

श्रवणं कीर्तनं विष्णुः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वंदनं दास्यं सख्यं आत्मनिवेदनम्।

हम लोग कीर्तन करते हैं, ये ख़ज़ाना है; ये सब निधि है। 'रामायण' में नव निधि है और बारह राशि है। 'रामायण' में राशि का अर्थ होता है ख़ज़ाना। भरपूर ख़ज़ाना। जैसे कहते हैं कि धनराशि।

जो आनंद सिंधु सुखरासी।

बलराशि; 'रामायण' में राशि की बात है। 'महाभारत' में चौदह ज्ञानराशि बलवान बताये हैं। तो बाप, नव निधि मानी नव प्रकार की भक्ति।

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा ।
दूसरि रति मम कथा प्रसंगा ।।

हमारे जीवन में कोई संत का संग हो, किसी साधु से हमारा संग हो; जिसके पास रहने से अच्छा लगता है, ऐसा कोई साधु-संग हमारे जीवन में है, तो मेरे श्रोता भाई-बहन, ये हमारी पहली निधि है; उसको संभालना। 'रामायण', 'भागवत', 'महाभारत', 'शिवपुराण' कोई भी शास्त्र, जिससे सद्बोध प्राप्त हो, ऐसी कोई भी कथा, प्रसंग सुनना, कहना, ये हमारी दूसरी निधि है।

गुर पद पंकज सेवा तीसरि भगति अमान ।

अभिमान छोड़कर अपने जो गुरु हो इस गुरु के प्रति अहंकारमुक्त अनुराग; उनकी स्वाभाविक सेवा। कोई बुद्धपुरुष की सेवा मिल जाय, हमारी तीसरी निधि है।

चौथि भगति मम गुन गन करइ कपट तजि गान ।।

गानेवाला कपट छोड़कर गाए तो, जहां कथा होती है वहां नव निधि होती है।

मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा ।
पंचम भजन सो बेद प्रकासा ।।

परमात्मा का मंत्र का विश्वासपूर्वक जाप ये पांचवी निधि है। फिर वो नाम हो कि मंत्र हो, 'सोऽहम्' हो कि कोई भी हो। विश्वास से उसका जप, उसका संकीर्तन ये पांचवीं भक्ति है; विश्वासपूर्वक उच्चार ये पांचवीं निधि है।

छठ दम सील बिरति बहु करमा ।
निरत निरंतर सज्जन धरमा ।।

संयमपूर्वक, समझपूर्वक अपने भाग में आये कर्म करें और धीरे-धीरे इस कर्मपरायणता से जब कोई योग्य मिल जाय तब कर्म की शृंखला से धीरे-धीरे निवृत्ति ओर जाना, सज्जनों की तरह वरताव करना ये छठ्ठी निधि है।

सातवँ सम मोहि मय जग देखा ।
मोतें संत अधिक करि लेखा ।।

सातवीं भक्ति सब में प्रभुदर्शन। और मुझसे भी मेरे संत को ज्यादा महान समझना ये सातवीं निधि।

आठवँ जथालाभ संतोषा ।
सपनेहुँ नहिं देखइ परदोषा ।।

आठवीं निधि है जितना पूरा पुरुषार्थ करने के बाद जो

फल मिले उसमें संतोष। काम पूरा करना, लेकिन अपनी ईमानदारी से पूरी प्रामाणिकता से पूरा काम करने के बाद जो परिणाम आये उसमें संतुष्ट हो जाना ये आठवीं निधि है। हमने काम किया उसका ये परिणाम आया, तुलना करने मत जाना। दोषदर्शन किया तो निधि जीर्ण-शीर्ण हो जाएगी। सपने में भी किसीका दोष मत देखना।

नवम सरल सब सन छलहीना ।
मम भरोस हियँ हरष न दीना ।।

सरल जीवन हमारी निधि है; सरल बोली हमारी निधि है; सरल वेश हमारी निधि है। दूसरों के साथ का व्यवहार छल-कपटमुक्त हमारी संपदा है। बार-बार तुलसी भरोसे की बात करते हैं। फायदा बहुत होता है भरोसे से।

किसी भी घटना का हर्ष ना हो और किसी भी घटना का शोक ना हो। इन दोनों से बचना है तो भरोसा बढ़ाओ। भरोसा हो तो समझना कि मेरे पर मुश्किल आई तो लगता है, मेरा हरि चाहता होगा तभी तो आई होगी। मुश्किल कम हो जाएगी। किसी भी घटना में भरोसे को पकड़ रखियेगा। दृढ़ भरोसा हमारी निधि है। सरल जीवन हमारी संपदा है। 'हनुमान, ये अष्ट प्रकार की सिद्धि और नव निधि तुम्हें देती हूं, इसलिए कि तू संग्रहखोर मत बनना, उसका दाता बनना; तेरी संपदा दूसरों को बांटना।' स्मित भी महादान है।

वियेटनाम का युद्ध खत्म हुआ। एक लश्कर का वड़ा और एक सैनिक युद्ध केदी के रूप में पकड़े गए। फिर मुकद्दमा चला और उसको रिहा कर दिया। कड़ी ठंडी के दिन थे। जेल से बाहर निकले तो भूख बहुत लगी थी। दोनों के पास ब्रेड़ थी, ये ब्रेड निकालकर बाहर ठंडी में कोने में बैठकर दोनों ब्रेड खाने लगे। एक कोने में छोटा-सा बालक बैठा था। बालक भी भूखा था। दोनों ने ब्रेड खा ली तब ध्यान गया, 'अरे, ये बालक बेचारा भूखा लगता है! हम तो ब्रेड खा गये!' दोनों की आह निकल गई! ठंडी में ठिठुरता गरीब का बालक, ये दोनों उसकी बात करने लगे। तो बालक ने मुस्करा दिया। दोनों ने बुलाया। दोनों को बड़ा अपराधभाव होने लगा कि हम ब्रेड खा गये! एक सिपाही के पोकेट में चोकलेट थी, बच्चे को चोकलेट दी तो ओर मुस्कराया। बच्चे ने चोकलेट का तीन भाग किया और एक जिसने चोकलेट दी उसको दिया, दूसरा भाग दूसरे सिपाही को दिया और तीसरा भाग खुद ने खाया। ये महादान है; ये परमदान है। एक मुस्कराहट बहुत बड़ा काम कर सकती है। किसी को शुभ विचार देना, किसी को तसल्ली देना, किसीको 'गीता' का श्लोक सुनाना, 'कुरान' की आयात, 'मानस' की चौपाई सुनाना, ये सब दान है। परमात्मा ने दिया है तो किसी को दो। भक्ति अमर है। नीतिनभाई वडगामा की रचना है-

साहिब, जगने खातर जागे ।
छेक भांगती राते जाते ऊंडुं तळियुं तागे।

आपणने ख़बर नथी होती, आपणे रातना सूईए छीए, एनो मतलब आपणो गुरु जागे छे। आपणे मोहनिंद्रामां सूता होईये, पण आपणो गुरु जागे छे.

माळाना मणका आपे छे हळवेथी होंकारो ।
साख पूरे छे पाछो धखती धूणी नो अंगारो ।
मन माने नहीं एनुं आ कायाना काचा धागे ।
साहिब, जगने खातर जागे ।

बालक बीमार पड़े तो कौन जागता है? माँ जागती है। ऐसे आश्रित के लिए बुद्धपुरुष जागता रहता हो। ये नियम है, ये उनका कर्तव्य है, ये उनका स्वभाव है।

थोड़ा कथा का क्रम। 'अयोध्याकांड' में अयोध्या के सुख से आरंभ हुआ। अयोध्या में सुख की वर्षा है। अतिशय सुख दुःख को जन्म देता है। महाराज दशरथजी राम को युवराजपद देने का निर्णय करते हैं। कैकेयी ने दो वरदान मांगे कि भरत को राज मिले और राम को वनवास मिले। राम-लक्ष्मण-जानकी तीनों मुनि का साज सजकर वन की वाट पकड़ते हैं। तमसा नदी के तट पर प्रथम रात्रि निवास। लोग सो गये। रात्रि में सुमंत को लेकर प्रभु शृंगबेरपुर जाते हैं। सुबह में लोग उठे तो हाहाकार हो गया! राम गये। सब अयोध्या लौटे।

गंगा के तट पर गुहराज से प्रभु की भेंट हुई। दूसरे दिन गंगा पार किया। केवट ने चरण धोए। सुमंत अयोध्या लौटे और प्रभु भरद्वाज ऋषि और वाल्मीकि आश्रम होते हुए चित्रकूट निवास करते हैं। दशरथजी को खबर मिली, कोई नहीं आया! दशरथजी छः बार 'राम' 'राम' बोलते-बोलते प्राणत्याग देते हैं। अयोध्या का सूर्य अस्त हो गया। भरत को बुलाया गया। पितृक्रिया हुई। भरत को समझाया गया। भरत ने कहा, 'गुरुदेव, मैं पद का आदमी नहीं, पादुका का आदमी हूं; सत्ता का आदमी नहीं, सत् का आदमी हूं। मुझे राम के पास ले चलो।' पूरी अयोध्या को लेकर भरतजी चित्रकूट जाते हैं। चित्रकूट में एक प्रेमनगर बस गया। सभाएं होती रही। आख़िर में भरत ने प्रभु पर छोड़ दिया। निर्णय हुआ, भरत लौट जाय और भगवान ने-

प्रभु करि कृपा पाँवरीं दीन्हीं।
सादर भरत सीस धरि लीन्हीं।।

चरनपीठ करुनानिधान के ।
जनु जुग जामिक प्रजा प्रान के ।।

भगवान ने कृपा करके पादुका भरतजी को प्रदान की। भरत ने पादुका मस्तक पर धारण की। दोनों समाज विदा लेते हैं। पादुका को पूछ-पूछ कर भरतजी अयोध्या का शासन चलाते हैं। एक दिन गुरुजी से पूछा, 'आप आज्ञा करे तो मैं अयोध्या के बाहर नंदिग्राम में कुटियां बनानकर निवास करूं।' गुरुजी ने कहा, 'तुम जो करते हो वो धर्म नहीं, धर्म का सार है। लेकिन माँ कौशल्या का दिल दुभ गया तो रामभक्ति सफल नहीं होगी।' माँ से रजा मांगना बहुत कठिन था। भरत-शत्रुघ्न माँ कौशल्या के पास आये। भरत ने कहा, 'माँ, मैं नंदिग्राम जाऊं?' माँ ने सोचा, यदि भरत को जीवित रखना है तो ये संत चाहे इतना करने देना चाहिए। कहा, 'तेरा मन नंदिग्राम में खुश रहता है, तो जाओ नंदिग्राम।' निर्णय हो चुका। भरतजी तपस्वीरूप में नंदिग्राम में रहने लगे। भरत के प्रेम और त्याग का वर्णन करते तुलसीदासजी 'अयोध्याकांड' का समापन करते हैं।

प्रभाव देखकर पूजा ही होती है, सेवा कभी नहीं होती; सेवा तो स्वभाव देखकर होती है। एक व्यक्ति के प्रभाव में आप आये, हो सकता है दूसरे का प्रभाव उससे ज्यादा प्रभावक है, तो आप यहां से वहीं चले जाओगे! आप प्रभाव आधीन हो, प्रभाव ने आप के चित्त को पकड़ा है। आप का चित्त स्वतंत्र नहीं रहा है। स्वभाव का बहुत बड़ा काम है। अपने बुद्धपुरुषों के बारे में सोचो, नहीं लगता कि हमारे बुद्धपुरुष जैसा स्वभाव कहीं देखा नहीं! क्या स्वभाव है! प्रभाव नाशवंत है, स्वभाव शाश्वत है।

मानस-हनुमानचालीसा

॥ ९ ॥

श्री रविशंकरजी सिखाते हैं आर्ट ऑफ लिविंग, मैं सिखाता हूं आर्ट ऑफ लविंग

आज से सावन मास का आरंभ हो रहा है; श्रावणी साधना के विशेष दिन है। भारतीय परंपरा में श्रावण मास में यद्यपि बहुत त्यौहार-उत्सव आते हैं; व्रज में जुले लगते हैं। रक्षाबंधन और सबसे बड़ा भगवान श्री कृष्ण का जन्म-महोत्सव हमारे केलेन्डर के मुताबिक श्रावण में लग जाता है। फिर भी ये महिना तो शंकर का है। भाद्रपद महिना पितृदेवताओं का महिना माना गया है। ये पितृओं का महिना है। और शास्त्र के आधार पर आश्विन मास, आसो महिना कृष्ण का महिना है। यद्यपि उसमें नवरात्रि है, दशहरा आता है, दीपावलि आती है, फिर भी ये महिना कृष्ण के नाम पर है। कार्तिक मास गुजराती केलेन्डर के मुताबिक नई साल का पहला महिना ये ईन्द्र का महिना माना गया है। मागशर मास ये विभूति मास है; उसको विभूति मास कहते हैं। कृष्ण ने 'गीता' में कहा है, 'मासानां मार्गशीर्षोऽहम्।' ये कृष्ण की विभूति है। पोष मास पुषन देवो का मास माना गया। पोष मास में अक्सर हमें पता न चले इस तरह पोषण होता है। माघ मास कामदेव, रति और वसंत का मास माना गया, जिसमें वसंतपंचमी आती है। फाल्गुन मास रंगदेवता का महिना है जिसमें होली मनाई जाती है। चैत्र मास, संवत्सर के मुताबिक नई साल चैत्र से शुरू होती है। चैत्र मास भगवान राम का महिना माना गया है। वैशाख मास बुद्ध का मास माना गया है। आषाढ मास वरुण देवता का माना गया है। लेकिन ये सावन -

सावन का महिना पवन करे शोर,
जियरारे झुमे ऐसे जैसे वनमां नाचे मोर।

सावन मास महादेव का महिना है। पूरे संसार को उसकी वधाई हो, 'नमः पार्वती पते हरहर महादेव।'

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं विभुं व्यापकं ब्रह्मवेदस्वरूपं।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहं।

श्री श्री रविशंकरजी सिखाते हैं आर्ट ओफ लिविंग; मैं सिखाता हूं आर्ट ओफ लविंग; प्रेम की कला। और जिसको प्रेम की कला आ जाती है उसको त्याग की कला भी आ जाती है, क्योंकि प्रेम-कला की संतान त्याग है, ऐसा

मेरी व्यासपीठ का सूत्र है। छोड़ ना देना, दूसरों के लिए समर्पित होना।

किसीने पूछा था कि बापू, हमें बड़ा संकोच होता है कि आप कथा शुरू करते हो तो 'बाप' कहते हो, तो अच्छा लगता है, लेकिन आप कहते हैं कि 'सबको मेरा प्रणाम', ये जरा हमें संकोच देता है; व्यासपीठ पर बैठकर हमें प्रणाम करे ये ठीक नहीं। बशीर बद्र का शे'र है -

इबादतों की तरह मैं ये काम करता हूं।
मेरा उसूल है पहले सलाम करता हूं।

मुझे खुदा ने गज़ल का दयार बख्शा है,
ये सल्तनत मैं महोब्बत के नाम करता हूं।

दयार मानी मुक्ति। खुदा ने बक्षा है मुझे चौपाईयों का दयार और ये सल्तनत मैं मेरे श्रोताओं के नाम करता हूं।

प्रश्न है, 'शिष्य को गुरु में भरोसा हो ऐसा ही भरोसा गुरु को शिष्य में होता है?' शिष्य के भरोसे का कुछ निश्चित नहीं, लेकिन गुरु को शिष्य में बहुत भरोसा होता है। आपको पता है, गुरु यह भरोसे का शरीर है, जैसे परमात्मा का; हाडमांस का देह नहीं होता परमात्मा का। ये चिदानंदमयी विग्रह होता है। 'विनयपत्रिका' में गोस्वामीजी ने लिखा है, 'राम, आपकी मूर्ति कृपा की बनी हुई है; हाडमांस की नहीं है। साक्षात् कृपा ने मानवरूप लिया है।' वैसे गुरु तो विश्वास से ही बनता है। उसका तो पूरा भरोसा शिष्य पर होता है। शिष्य का भरोसा गुरु पर होता ही है अवश्य; लेकिन ये कोई प्रश्न नहीं है कि गुरु का भरोसा शिष्य पर होता है कि नहीं, पक्का भरोसा होता है शिष्य पर गुरु का।

जो यह पढै हनुमान चालीसा।
होय सिद्धि साखी गौरीसा।।

कल के सूत्र का अनुसंधान, माँ जानकी हनुमानजी को अष्टसिद्धि और नवनिधि देती है और कहती है, तू दाता बनना। माँ दाता चाहती है। माँ ईश्वर का पर्याय है। मेरे देश के ऋषियों ने ठीक निर्णय किया, 'मातृ देवो भव।' माता तीन प्रकार से मानी गई है। आधिभौतिक माता, आधिदैविक माता और आध्यात्मिक माता। आधिभौतिक माता अन्न देती है। जब तक माँ दूध पिलाये, भोजन कराये, हमें बड़ा करे, माँ माँ ही है, लेकिन ये आधिभौतिक माँ है। हम पृथ्वी को भी माँ कहते हैं। वेद तो कहता है, हम उनके पुत्र है, पृथ्वी हमारी माता है। खांडववन को जलाया था तब छः वस्तु बची थी; छः लोग बचाये गये, उसमें एक मय दानव, अग्निदेव बचा, एक अश्वसेन नाग बचा। तो, इन्द्र प्रसन्न होता है और अर्जुन और कृष्ण को वरदान देता है, आप जो चाहो, मैं दूंगा। अर्जुन ने मांगा है, मुझे शस्त्र दीजिए, शस्त्रविद्या दीजिए; मेरा शस्त्र विफल ना जाय ऐसे शस्त्रों का दान करो। अर्जुन ने स्वार्थी मांग की है। निजी मांग व्यक्त करता है। लेकिन इन्द्र बहुत सुंदर बोला, आपकी मांग के अनुसार अर्जुन मैं आपको शस्त्र और शस्त्रविद्या विशेष रूप में दूंगा, लेकिन इसके लिए आपको तपस्या करनी पड़ेगी। जब किसी देवता के पास आप स्वार्थपरक मांग करोगे तो देवता देगा जरूर लेकिन मुदत डालेगा, तुरंत नहीं देगा; क्योंकि मांग स्वार्थी है; परमार्थी नहीं है। अर्जुन तप करता है और कुछ समय के बाद वरदान फलित होता है। 'हनुमानचालीसा' का सारतत्त्व क्या है? आखिर में क्या मांगा? आदमी की आख़िरी मांग क्या? अष्टसिद्धि, नौ निधि की मांग। तुलसीदासजी आख़िर मांग क्या करते हैं?

कीजै नाथ हृदय महँ डेरा।

आप मेरे हृदय में निवास करे, क्योंकि आप मेरे हृदय में आ जाओ तो सभी कामना अपनेआप पूरी हो जाएगी, मैं भीख क्यों मागूं? अंत में कहते हैं -

पवन तनय संकट हरन मंगल मूरति रूप।
रामलखन सीता सहित हृदय बसहु सुर भूप।।

मेरे हृदय में आप बसो। स्वार्थी मांग सब खतम हो गई। अब इन्द्र श्री कृष्ण से कहता है, तुम मांगो; जो चाहिए मांगो। तब कृष्ण ने कहा, कुछ नहीं चाहिए, 'प्रीति पार्थेन शाश्वती।' मुझे अर्जुन के प्रति शाश्वत प्रेम रहे, ये कृष्ण की मांग है। अर्जुन मांगे कि मुझे कृष्ण से प्रेम हो ये तो समझ में आता है। अर्जुन शाश्वत नहीं है। अर्जुन में ऐसा क्या था कि गोविंद उसका प्रेम चाहते हैं? पार्थ का अर्थ है पृथा का पुत्र। पृथा मानी कुंती और पार्थ का अर्थ है पृथ्वी का पुत्र; और पृथ्वी के पुत्र हम सब मानवजात है। इसलिए अर्जुन के प्रति ही शाश्वत प्रीति हो ऐसा कृष्ण ने नहीं मांगा, इस धरती पर जितने इन्सान है उसके प्रति मेरी प्रीति शाश्वत हो ऐसा मांगा।

युवान भाई-बहन, अपने कर्म की और मत देखो। कर्म है बुरे चलो, डिप्रेस हो जाओगे! हम जीव है, कर्म ठीक नहीं ऐसा महसूस हो, तो जीवन गिर जाएगा! उसकी करुणा देखो। जो पृथ्वी के समस्त ईन्सानों से प्रेम की प्रतीक्षा करता है, हमें क्या डर? धर्मगुरुओं ने हमें डराकर करीब-करीब मारा डाला! हे हरि, हमारे अवगुण मत देखो। इतना करो। और प्रभु सब के दिल की जानता है।

एक आदमी था वो कावड में पानी भरके एक बाग में सींचाई करने के लिए रोज जाता था। कावड में दो घड़े होते हैं। एक घड़े में पूरा का पानी भरा रहता है। एक घड़े में छिद्र थे तो जहां पानी पहुंचाना था वहां जाते-जाते एक घड़ा तो पूरा पहुंचता था दूसरा घड़ा छिद्र के कारण पूरा पानी नहीं पहुंचता था। तो एक दिन पूरे घड़े को अहंकार आ गया, उसने छिद्रवाले घड़े की आलोचना की, मालिक हम दोनों को उठाता है; मैं देख, पूरा का पूरा और तू करीब-करीब आधा हो जाता है! तेरा पानी बह जाता है!' तो जिसका पानी बह जाता है वो घड़ा बेचारा दु:खी हुआ, मेरे में छिद्र है, मैं पापी हूं, बोज़ बन बैठा हूं। और रोज वो पूरा घड़ा उसको यही बात सुनाते उसकी आलोचना करता रहा। बेचारा एकदम निरुत्साह हो गया। तब वो उठानेवाले कावडवाले ने आधे घड़े को कहा, 'देख, वो घड़ा तो वहां जाता है तब कुछ होता है लेकिन तेरे छिद्रों से पानी जहां-जहां टपकता है वहां कितने फूल खिले हैं देख ले, ये तूने खिलाये हैं। छिद्रवाला भी फूल सिला सकता है। नासीपास ना हो।'

तो, माता के तीन रूप, इनमें एक आधिभौतिक मानी धरती, जो अन्न देती है, हमें पोषण देती है। भौतिक माता के रूप में जब तक है अपनी माँ, हमें दूध पिलाती है, हमारा विकास होता है। आधिभौतिक माता अन्न देती है और बच्चे का मननिर्माण आधिदैविक माँ करती है। एक माँ बच्चे को तैयार करती है तब उसका भौतिक रूप काम में नहीं आता, उसका आधिदैविक रूप काम में आता है। शिवाजी की माँ जीजाबाई आधिदैविक बनकर राम-लक्ष्मण की बात सुनाते उसको तैयार करती है। आध्यात्मिक माँ आत्मा देती है। मेरी दृष्टि में जानकी तीनों प्रकार की माँ है। ये पृथ्वी की बेटी तो है ही, आधिभौतिक है। वो हमारा मानसिक हौसला बढ़ाती है; और हमें आध्यात्मिक होकर आत्मा प्रदान करती है; ऐसी माता सीता है इसलिए तुलसीदास ने शब्दप्रयोग किया-

अस बर दीन्ह जानकी माता ।

इसके बाद आता है 'राम रसायन तुम्हरे पासा'। उस 'हनुमान चालीसा' के नववें भाग में ये संमिलित नहीं करता, क्योंकि रामरसायन अद्‌भुत है। रामरसायन मानी भक्तिरसायन; रामरसायन मानी प्रेम रसायन। तुलसी ने 'रसायन' शब्द का प्रयोग करके बहुत से दरवाजे खोल दिये। समय लेकर संवाद करना बहुत आवश्यक है।

कथा के क्रम में भरत राम से पादुका लेकर आये, नंदिग्राम में तपस्या करने लगे। चित्रकूट में रहते

ठाकुर एक दिन मंदाकिनी के घाट पर स्फटिक शिला पर बैठे हैं। लक्ष्मणजी फल-फूल लेने वन में गए हैं। और भगवान राम अपने हाथों से जानकीजी को शृंगार कर रहे हैं। मर्यादा टूटती नहीं है और वनवासी होते ही फूल की माला से जानकीजी को संवार रहे है, संसार को एक प्रेरणा देते है कि मर्यादा नहीं टूटनी चाहिए, लेकिन तुम्हारा पती-पत्नी का दांपत्यजीवन प्रेमपूर्ण होना चाहिए। प्रेम स्वयं मर्यादा टूटने नहीं देता; मर्यादा तोड़ता है मोह, आसक्ति, कामनाएं। प्रेम तो बिलग बस्तु है। इतने में इन्द्र का बेटा जयंत घुमने निकला। जयंत ने कौअे का रूप लिया। और सियाजु के चरण जहां थे वहां उसने चांच से प्रहार किया। सीताजी के चरण में से रक्त निकला। भगवान ने देखा, ईन्द्र का बेटा जयंत, तेरा ये साहस? प्रभु फूल की माला बना रहे थे उसी सींक को धनुष बनाया। मंत्रोच्चार करके ब्रह्मास्त्र बनाया और जयंत के पीछे छोड़ दिया। आगे जयंत और पीछे प्रभु का बाण! इन्द्रलोक में गया, 'पिताजी बचाओ।' पिताजी ने दरवाजा बंद कर दिया कि राम के द्रोही को मैं नहीं रखता। ब्रह्मा के पास गया, हर जगह भटका; किसी ने आश्रय नहीं दिया। इतने में नारदजी आये। नारदजी ने देखा, जयंत व्याकुल है! और नारद के दिल में दया आ गई। जयंत रोने लगा। नारदजी ने कहा, 'मूढ़, अपराध राम का किया और शरणागति दूसरों के पास लेने गया? जिसका अपराध करो, उसकी क्षमा मांगो, उसकी शरण में जाओ।' पश्चात्ताप की भी एक गंगा होती है। लाठीना राजकवि कलापी ने कहा-

देखी बूराई ना डरुं हुं शी फिकर छे पापनी?
धोवा बुराईने बधे गंगा वहे छे आपनी।

किस्मत करावे भूल ते भूलो करी नाखुं बधी,
छे आखरे तो एकली ने ए ज यादी आपनी।

'जिसके चरण में तूने चंचुपात किया वो जानकी के शरण में जा, वो माँ है।' आया, सीताजी के चरण में पड़ गया! जानकीजी को करुणा आ गई। उसको राम के शरण में रख दिया, 'भगवान, मेरा अपराध किया है, मैंने क्षमा कर दी, तो आप भी छोड़ दो ना।' प्रभु ने कहा, 'मैं कोई दंड नहीं दूंगा तो नीतिमारग भ्रष्ट हो जाएगा।' इसलिए गोस्वामीजी कहते हैं -

एक नयन करि तजा भवानी ।

संतों ने अर्थ बताया, एक आंख फोड़ी का अर्थ ये है कि एक दृष्टि से दुनिया को देखो। नरसिंह मेहता ने गाया है-

समदृष्टि ने तृष्णा त्यागी, परस्त्री जेने मात रे;
जिह्वा थकी असत्य न बोले, परधन नव झाले हाथ रे.
वैष्णवजन तो तेने कहीए जे पीड पराई जाणे रे;
परदु:खे उपकार करे ने मन अभिमान न आणे रे.

भगवान ने थोड़ा दंड दिया; शरणागत होकर जयंत लौट गया। ठाकुर ने चित्रकूट से विदा ली। और अत्रि ऋषि के आश्रम में राम-लक्ष्मण-जानकी जाते हैं। अत्रि बहुत प्रसन्न हुए। ठाकुरजी की स्तुति की।

नमामि भक्त वत्सलं । कृपालु शील कोमलं ।
भजामि ते पदांबुजं । अकामिनां स्वधामदं ।।

प्रलंब बाहु विक्रमं । प्रभोऽप्रमेय वैभवं ।
निषंग चाप सायकं । धरं त्रिलोक नायकं ।।

जानकीजी अनसूयाजी से मिले; नारीधर्म का उपदेश पाया। फिर प्रभु वहीं से आगे गये। सरभंग नाम के संत मिले। सरभंग का उद्धार कर के प्रभु आगे बढ़े। सुतीक्ष्ण महाराज का आश्रम आया। भगवान उसको दर्शन देते हैं। कुंभज ऋषि के पास गये। राम-लक्ष्मण-जानकी पंचवटी की यात्रा करते हैं। रास्ते में गीधराज से मैत्री की। प्रभु पंचवटी में निवास करते हैं। एक दिन लक्ष्मण ने पांच प्रश्नों की जिज्ञासा की। प्रभु ने आध्यात्मिक प्रश्नों के उत्तर दिये। लक्ष्मणजी की विशेष जागृति आई तब शूर्पणखा आई। जब कोई विशेष जागता है तब कोई ना कोई कामना, तृष्णा उसीकी शूर्पणखा वेश पलट कर आती है। शूर्पणखा आती है, दंडित कर दी गई। खर-दूषण को बहकाया। खर-दूषण चौदह हजार की सेना लेकर आये। राम ने सब को निर्वाण दिया। शूर्पणखा रावण के पास जाकर रो पड़ी। रावण ने योजना बनाई। मारीच को लेकर जाता है। सीता का अपहरण हुआ। भगवान राम सीताजी की खोज में निकले। यहां रावण सीता को लेकर जाता है। जटायु से युद्ध हुआ। रावण सीताजी को अशोकवाटिका में रख देता है। प्रभु जानकी की खोज करते जटायु के पास पहूंचे और जटायु ने भगवान से सभी कथा कह दी। जटायु सारूप्यमुक्ति पाता है। कबंध को दिव्यगति देकर प्रभु शबरी के आश्रम में आये। भगवान शबरी के सामने नौ प्रकार की भक्ति की चर्चा करते हैं। और शबरी योगाग्नि में अपने देह को समर्पित कर के वहां चली गई जहां से लौटना ना पड़े। प्रभु वहां से पंपा सरोवर के तट पर आये। वहां नारदजी मिले; चर्चा हुई। 'अरण्यकांड' पूरा होता है।

'किष्किन्धाकांड' में भगवान की यात्रा आगे बढ़ती है। हनुमानजी के द्वारा सुग्रीव से मैत्री हुई। वालिवध हुआ। सुग्रीव को राज्य मिला। चातुर्मास करने के लिए प्रभु प्रवर्षण पर्वत पर रुके। योजना बनी सीताशोध की। अंगद को नायक बनाकर दक्षिण में टुकड़ी भेजी। सब प्रभु को प्रणाम कर के जाने लगे। हनुमानजी ने आख़िर में प्रणाम किया। प्रभु ने मुद्रिका दी। संदेश दिया। स्वयंप्रभा से मिले। संपाति से मिले और समंदर के तट पर सब बैठे। संपाति ने कहा, जानकीजी सतयोजन दूर लंका में है। जाये कौन? हनुमंतजी चूप थे। जामवंत ने आह्वान किया, 'राम के लिए आप का अवतार है।' सुनते ही हनुमानजी पर्वताकार हुए। 'किष्किन्धाकांड' पूरा होता है। हनुमानजी लंका जाने के लिए तैयार। 'सुंदरकांड' का आरंभ होता है -

जामवंत के बचन सुहाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।।

तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई।
सहि दुख कंद मूल फल खाई।।

हनुमानजी लंका में प्रवेश करते हैं। जानकी कहीं मिली नहीं; विभीषण मिले; युक्ति बताई और हनुमानजी जानकी के पास पहूंच गये। हनुमानजी ने मुद्रिका डाली। हनुमानजी प्रभुचरित्र सुनाने लगे। जानकी के दु:ख भागे। हनुमानजी प्रगट हुए। माँ ने आशीर्वाद दिये। हनुमानजी फल खाते हैं, वृक्ष तोड़ते हैं। असुरों से संघर्ष हुआ। अक्षय मारा गया। ईन्द्रजित हनुमानजी को पकड़कर लंका के दरबार में आया। रावण के साथ हनुमानजी की चर्चा हुई। मृत्युदंड का एलान किया। विभीषण ने कहा, नीति मना करती है कि दूत को मारा न जाय; ओर कोई दंड करो। पूंछ पर घी-तेलवालें कपड़ें लपेट कर जला दो! सब ने पूंछ जलाई; श्री हनुमानजी ने लंका जलाई। पूंछ का अर्थ है प्रतिष्ठा। हनुमान जैसा भजन होगा तो प्रतिष्ठा तो नहीं जलेगी लेकिन समाज की गलत मान्यताओं को जला देगी। श्री हनुमानजी सागर में स्नान करके जानकीजी के पास आये। माँ ने चुडामणि दिया। हनुमानजी लौटे मित्रों के संग सुग्रीव के पास। प्रभु और हनुमान फिर मिले। यात्रा आगे; समुद्र के तट पर प्रभु ने डेरा ड़ाला। तीन दिन भगवान समुद्र से याचना करने बैठे। तीन दिन में समुद्र माना नहीं तब प्रभु ने धनुषबाण उठाया; समंदर में खलबली मची! ब्राह्मण का रूप लेकर समंदर भगवान के शरण में आया। समंदर ने सेतुबंध का प्रस्ताव दिया और 'सुंदरकांड' समाप्त हुआ।

'लंकाकांड' के आरंभ में सेतुबंध निर्मित हुआ। प्रभु ने कहा, यहां उत्तम धरणी है, भगवान शिव की स्थापना की जाय। भगवान अपने हाथों से रामेश्वर भगवान का स्थापन करते हैं। भगवान की सेना लंका में; सुबेर पर डेरा; रावण का रस भंग। दूसरे दिन अंगद एक बार फिर संधि का प्रस्ताव लेकर गया। रावण न माना; युद्ध अनिवार्य हुआ। रावण और राम का युद्ध शुरू हुआ। इकत्तीस बाण से प्रभु ने रावण को दिव्यगति प्रदान की। प्रभु के चेहरे में रावण का तेज समा गया। मंदोदरी आई। प्रभु की स्तुति की। रावण की क्रिया हुई। विभीषण को राजतिलक हुआ। जयजयकार हुआ। जानकीजी को ख़बर दी गई। सीताजी लौट आई। अग्नि स्वयं मूल सीताजी को लौटा गये।

पुष्पक विमान तैयार होता है। साथीओं को लेकर प्रभु आरूढ़ हुए। अयोध्या की यात्रा का आरंभ होता है। सेतुबंध का दर्शन, रामेश्वर का दर्शन, कुंभज आदि ऋषिओं का दर्शन करते-करते भगवान का विमान अवध की ओर। यहां हनुमानजी को अयोध्या ख़बर देने को भेज दिये। भगवान शृंगबेरपुर निषादों की बस्ती में उतरे; लोग दौड़ें। भगवान ने चौदह साल के बाद भी भीलों को याद किया। यहां तुलसीदास 'लंकाकांड' पूरा करते हैं।

हनुमान अयोध्या पहूंचते हैं। भरतजी विह्वल है। हनुमानजी ने संभाल लिया और पूरी अयोध्या में ख़बर पहूंचा दी कि ठाकुर आ रहे हैं। हनुमानजी ने राम को ख़बर दी। विमान उड़ान भर रहा है। अयोध्या के सरजूतट पर प्रभु का विमान उतरा। राम-लक्ष्मण-जानकी विमान से जनमभूमि पर उतरे। रामजी ने वशिष्ठ के चरणों में धनुष और बाण एक ओर फेंककर प्रणाम किया। रामजी ने अपना ऐश्वर्य प्रगट किया-

अमित रूप प्रगटे तेहि काला।
जथा जोग मिले सबहि कृपाला।।

जितने जीव थे जड़-चेतन, सब की ईच्छा के अनुकूल प्रभु ने रूप धारण किया। सब को भगवान का साक्षात्कार हुआ। सब से पहले प्रभु कैकेयी माँ से मिले। माँ का संकोच विदारण किया। सुमित्रा आदि सब को मिले। कौशल्या माँ से मिले। पूरी अयोध्या हर्ष में डूबी है। वशिष्ठजी पधारे। ब्राह्मणों को कहा, आज ही राजतिलक कर दें; कल का भरोसा न करे।

भगवान राम-लक्ष्मण-जानकी तैयार हुए। दिव्य सिंहासन मंगवाया गया और राघवेन्द्र भूमि को, जनता को, सूर्य को, दिशाओं को, ऋषिमुनिओं को, अपनी माताओं को प्रणाम करके गादी पर विराजित। जानकीजी वाम भाग में विराजित और त्रिभुवन को रामराज्य देते हुए वशिष्ठजी ने तिलक किया। छः महिने बीत गये। मित्रों को विदाई दी। केवल हनुमानजी रहे। समय मर्यादा पूरी हुई। जानकीजी ने दो पुत्रों को जनम दिया। वैसे तीनों भाईओं के घर भी दो-दो पुत्र हुए, ऐसा लिखकर तुलसीजी ने रघुकुल की कथा को विराम दिया। आगे कागभुशुंडि महाराज का जीवन चरित्र है। गरुडजी सात प्रश्न भुशुंडिजी को पूछते हैं। उसका अद्‌भुत आध्यात्मिक जवाब है और फिर कागभुशुंडि गरुड के सामने कथा को विराम देते हैं। याज्ञवल्क्यजी ने कथा को विराम दिया कि नहीं ये स्पष्ट नहीं। कैलास के उत्तुंग शिखर पर भगवान शिवजी पार्वती के सामने कथा कर रहे थे; शिव ने कथा को विराम दिया; और पूज्यपाद गोस्वामीजी अपने मन को और संतसमाज को कथा कहते हुए विराम देते हैं।

राम का सुमिरन सत्य है; राम को गाना मानी प्रेम है; निरंतर कथा सुनते हैं ये करुणा है। तो ये तीन सूत्र मुझे शास्त्र के समापन से प्राप्त हुए हैं। मेरी पचपन साल की रामकथा की यात्रा का ये निचोड़ है-सत्य, प्रेम, करुणा। तो -

रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि।
संतत सुनिअ रामगुन ग्रामहि।।

मेरी व्यासपीठ आप के सामने नवदिवसीय रामकथा गा रही थी; व्यासपीठ से मैं रामकथा के विराम की ओर अग्रसर हूं। और ये नवदिवसीय प्रेमयज्ञ का, इतना निष्काम सत्कर्म का फल जो ईकठ्ठा हुआ; आओ, सावन शुरू हुआ, हनुमान शंकरावतार है, इसलिए शिवजी के चरणों में, सावन के महिने में इस नवदिवसीय प्रेमयज्ञ के पवित्र जल से हम और आप मिलकर महादेव के चरणों में अभिषेक करते हैं, 'लो बाप, हमारी ओर से पूजा स्वीकार करो।' महादेव को ये कथा अर्पण करता हूं।

माता तीन प्रकार से मानी गई है। आधिभौतिक माता, आधिदैविक माता और आध्यात्मिक माता। आधिभौतिक माता अन्न देती है। जब तक माँ दूध पिलाये, भोजन कराये, हमें बड़ा करे, ये आधिभौतिक माँ है। हम पृथ्वी को भी माँ कहते हैं। आधिभौतिक माता अन्न देती है और बच्चे का मननिर्माण आधिदैविक माँ करती है। शिवाजी की माँ जीजाबाई आधिदैविक बनकर राम-लक्ष्मण की बात सुनाते उसको तैयार करती है। आध्यात्मिक माँ आत्मा देती है। मेरी दृष्टि में जानकी तीनों प्रकार की माँ है। ये पृथ्वी की बेटी तो है ही; आधिभौतिक है; वो हमारा मानसिक हौसला बढ़ाती है; और हमें आध्यात्मिक होकर आत्मा प्रदान करती है।

मानस-मुशायरा

इबादतों की तरह मैं ये काम करता हूं।
मेरा उसूल है पहले सलाम करता हूं।
मुझे खुदा ने गज़ल का दयार बख्शा है,
ये सल्तनत मैं महोब्बत के नाम करता हूं।

– बशीर बद्र

उसकी वो जाने उसके पास-वफ़ा था कि न था,
तुम 'फ़राज़' अपनी तरफ़ से तो निभा जाते।
कितना आसां था तेरी हिज्र में मरना जाना,
फिर भी इक उम्र लगी जान से जाते जाते।

– अहमद फ़राज़

ये सच है कि तूने मुझे चाहा भी बहुत है।
लेकिन मेरी आंखों को रुलाया भी बहुत है।
जो बांटता फिरता है जमाने को उजालें।
उस शख्स के दामन में अंधेरा भी बहुत है।

– शाद मुरादाबादी

लिपटता हूं मैं जब उससे, जुदा कुछ और होता है।
मनाता हूं मैं जब उसको, खफ़ा कुछ और होता है।
न कुछ मतलब अज़ानों से, न पाबंदी नमाज़ों की,
मुहब्बत करनेवालों का खुदा कुछ ओर होता है।

– हर्ष ब्रह्मभट्ट

निरंतर हरिनाम से अपने चित्त की चट्टान टूटती है

अखंड रामनाम संकीर्तन, महुवा में मोरारिबापू का मननीय वक्तव्य

सर्व प्रथम प्रेम भिक्षुक महाराज जिन्हें सद्गुरु मानते हैं ऐसे पूज्य काश्मीरीबाबा उनकी आध्यात्मिक चेतना को मेरा प्रणाम। हमने प्रेमभिक्षुक महाराज के दर्शन किए हैं। रामनाम का संकीर्तन करते-करवाते वे कई बार देहातीत हो जाते थे। ऐसे नामप्रेमी संत पूज्यपाद प्रेमभिक्षुकबापजी, उनकी नामचेतना को मेरा प्रणाम। महुवा के प्रांगण में 'श्री राम जय राम जय जय राम' तेरह अक्षर के मन्त्र का निरंतर संकीर्तन हो, उन्होंने इसका बीजारोपण किया था। सेवा संस्कार आश्रम में उनके सभी ट्रस्टीओं ने बहुत प्रेम से इस स्थान में नामसंकीर्तन की स्थापना की।

बाप! हनुमानजयंती के दिन मैं यहीं होता हूं। जैसे गुरुपूर्णिमा के दिन तलगाजरडा रहता हूं। बीच-बीच में तो ब्रह्मलीन पूज्य डोंगरेबापा की तिथि पर मैं कार्तिक के प्रथम सप्ताह में यहीं रहता हूं। अत: मुझे भी आने का आनंद मिलता है। मुझे यहां आना चाहिए क्योंकि रामनाम संकीर्तन के आरंभ का साक्षी रहा हूं। यह संकीर्तन अठारहवें वर्ष में प्रवेश कर रहा है। यह महत्त्वपूर्ण घटना है। कई जगहों पर इनसे भी ज्यादा वर्षों से चल रहा है। मुझे विशेष आनंद यह है कि बहनों-भाईयों अपने-अपने ढंग से लोकशैली और शास्त्रीय शैली में तेरह अक्षरों के मंत्र से वातावरण में गुंजन भर रहे हैं। इस कार्य का आरंभ हुआ तब मैंने कहा था कि जब-जब समय मिलेगा तब कीर्तन में आऊंगा। मैं आता भी रहा हूं। महुवा के आंगन में सत्रह वर्षो से यह अखंड संकीर्तन गूंज रहा है इसकी मुझे प्रसन्नता है।

भूस्तर शास्त्रीयों से सुना है कि यह भूस्तरीय सत्य है कि ईश्वर ने धरती बनाई। मिट्टी-पथ्थर बनाए। एक विद्वान से जानकारी मिली कि ईश्वर ने रेती नहीं बनाई। रेत पथ्थर का सर्वाधिक छोटा-सा अंश है। तो, फिर यह रेत कहां से आई? जहां समुद्र है वहां ढेर सारी रेत! इतने सारे मकान बनाने में इतनी सारी रेत का उपयोग होता है!

भूस्तरीय पक्ष का मानना है कि ईश्वर ने जब आदिसृष्टि बनाई तो रेत तो बनाई ही नहीं। तो, फिर ढेर सारी रेत कहां से आई? उनका कहना है सृष्टि की उत्पत्ति को अरबों साल हुए और इतने वर्षों से समुद्र का पानी निरंतर तटस्थित चट्टान को जोर से टक्कर मारता रहता है और उसी टक्कर के कारण चट्टान के छोटे-छोटे कण होने से यह रेत उत्पन्न हुई है। मेरा यही कहना है कि निरंतर पानी की टक्कर से युगों के बाद पहाड़ रेती में परिवर्तित हो जाते हैं। पर यह प्रक्रिया लगातार होनी चाहिए। जिस जगह नाम संकीर्तन हो उसकी तालमयी, सूरमयी टक्कर से मेरे जैसे और आप जैसे चट्टान हो गए हो ऐसे चित्त पर टकराहट होनी चाहिए; फिर चाहे वह भाव, अभाव, आलस्य या रोष से हो -

भायँ कुभायँ अनख आलसहूँ।

नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ।।

पहले पथ्थर में से रेत हुई। फिर हमने रेत का उपयोग किया। यह जरूरी है पर इससे ज्यादा जरूरी है कि हमारे चित्त की चट्टान हरिनाम से टूटे। वेदांत और योगवेदांत की दृष्टि से हमारे चित्त में काफी विक्षेप आते हैं। अपने यहां और गांव में एक शब्द प्रचलित है, 'इसे चित्तभ्रम हो गया है।' माने भ्रमित चित्त। इस तरह अंदर विक्षेप आते ही रहते हैं। परंतु वह चैतसिक चित्तमय पथ्थर अथवा पथ्थरमय चित्त हरिनाम की थप्पड खाते रहते हैं। तो, वह सूक्ष्म अति सूम बने तब चित्त की ऊर्जा में वृद्धि होती है। विज्ञान का नियम है कि जो अणु ज्यादा टूटता है तो वह ज्यादा शक्तिमान बनता है। सूक्ष्म अणु अनियंत्रित बन जाता है। उसकी शक्ति बढ़ती है।

बाप, इस चित्त को ऊर्जावान बनाने के लिए हमारे यहां ऋषिमुनियों ने बहुत ही प्रयोग किए हैं। सतयुग का प्रयोग ध्यान था। फिर त्रेतायुग में चित्त को प्रबल करने ऋषिमुनियों ने दूसरा प्रयोग दिया और वह था यज्ञ। फिर द्वापर आया। इसमें पूजन-अर्चन हुआ। फिर कलियुग आया। यह बहुत खराब है लोग ऐसा मानते हैं। कर्मकांड में बैठे तब आचार्य हाथ में जल देकर कहते 'कलि प्रथम चरणे'; अब जो कलयुग आयगा वह बहुत भयानक होगा ऐसा हमें डर बताया जाता है! फिर भी मुझे लगता है कि प्रथम चरण में कलियुग में जो इतना रामनाम लिया जाता है तो ज्यों-ज्यों कलियुग आगे बढ़ेगा अच्छा ही होता रहेगा। पोझिटिव ही देखना चाहिए। अभी बहुत अच्छा चल रहा है।

मैं कथा के पचास-पचपन वर्ष के अनुभव से कहूं कि जब कथा में माईक मिलता था तो हमें हर्ष होता था कि अहाहाहा, हम माईक में कथा करते हैं! और आज यहां कथा में जो भी बोले तब पूरी दुनिया लाइव प्रसारण से उसी समय सुनती है! इस कलियुग का प्रथम

चरण इतना अच्छा है तो मुझे लगता है कि शायद ऐसा विज्ञान आयगा कि कथाकार टी.वी. में से बाहर निकल जायगा! 'देवायत पंडित दा'डा दाखवे', ऐसा अपना लोकभजन है; उसमें उन्होंने जो लक्षण दिखाये कि भाई, ऐसा कलियुग आयेगा; वह उन्होंने जो कहा, वह सच है। देवायत पंडित को हुए बहुत वर्ष नहीं हुए हैं। उन्होंने कहा कि 'दोरडे दीवा थशे'; यह तो हो गया। उन्होंने एक वस्तु कही; भगवान करे वह वस्तु सच्ची न भी हो कि समुद्र अंबाजी मात से मिलने जायगा। अंबाजी उसकी बहन है और भाई उसे वस्त्र चढाने जाएगा। सच हो जाय तो क्या-क्या हो! जूनागढ़ में गिरनार की तलहटी में हेन्डपंप लगाने पर खारा पानी निकले तो समुद्र अंबाजी से मिलने गया हो ऐसा ही लगे!

कलियुग की बातें इस तरह सच हो रही है तब उसके प्रथम चरण में रामनाम की इतनी महिमा हो; जिन्स पहने युवक रात में चाहे कहीं भी घूमते हो और भटकते-भटकते यहां आकर उन्हें रामधून की लगनी लगे तो यह कलियुग का प्रथम चरण बहुत अच्छा है। चाहे रामनाम की कोई टीका करे पर यहां आकर बैठ जाते हैं। चौबसी घंटे यह क्रम चले ऐसा कलियुग के प्रथम चरण में होता हो तो आगे के चरण काफी अच्छे जायेंगे। मुझे तो ऐसा लगता है कि कलियुग हम को पसंद आ जायगा। मुझे तो पसंद आ गया है! यह बहुत अच्छा काल है।

तो, निरंतर रामनाम की थप्पड मानवी के चित्त के चट्टान को अणु बना देता है और अणु खंड-खंड होते हुए ज्यादा ऊर्जामय बनता है। ऐसा चित्त हमें सत् और आनंद तक पहुंचा सकता है। अब यह अखंड रामनाम संकीर्तन यों प्रासंगिक है या नहीं ऐसी चर्चा बुद्धिवादियों में चलती रहती है। रात को यहां माईक बंद कर देते होंगे। हरिनाम की साधना कभी भी किसी को तकलीफ दे इस रीति से नहीं करनी चाहिए। तो, ही हरिनाम सफल होता है। मीरां को लगा मेरे भजन से चितौड में तकलीफ हो रही है तो उन्होंने चितौड छोड़ दिया। मीरां को लगा वृंदावन में मेरे भजन से इन साधु-महाराजों को तकलीफ हो रही है तो उन्होंने वह भी छोड़ दिया। द्वारका पहुंची। द्वारिका में भी परमसीमा आ गई तब उन्होंने शरीर भी कृष्ण में छोड़ दिया। यह नियम है कि भजन से दूसरों को तकलीफ पहुंचे ऐसा नहीं करते। हमारे यहां तो अच्छा है। एक जगह अखंड कीर्तन में मैंने देखा है कि भाईयों और बहनों दोनों कीर्तन करते हैं, दोनों अलग-अलग राग में करते हैं! किसकी बारी आए और रंग जमे! इस में स्पर्धा नहीं होती बाप! श्रद्धा होती है।

संकीर्तन अठारवें वर्ष में प्रवेश करता है तब युवा भाईयों और बहनों इसमें शामिल हो इसका हमें आनंद है। पर यह प्रासंगिक है या नहीं? यह चौबीस घंटे का होना चाहिए या नहीं? कुछेक कहते हैं मात्र 'र' बोलने से बेडा पार हो जाता है तो यह सब करने की क्या जरूरत है? अत: मैं तो एक बार यह कहता हूं कि तुम एक बार 'र' बोल ले; हमारे पास क्यों आया है? बाप, यह निरंतरता का प्रतीक है। इसे स्थूलरूप से नहीं लेना चाहिए। निरंतर चले यह उत्तम है। चलना चाहिए। पर इसका सैद्धांतिक पक्ष यह है कि यह निरंतरता का प्रतीक है। हरिनाम निरंतर रहे तो क्या न हो? मूल वस्तु यह है। 'रामचरित मानस' की एक चौपाई है जिसमें पार्वती ने शंकर को ऐसा कहा है कि आपके साथ रहकर मेरा ऐसा अनुभव है कि -

तुम्ह पुनि राम राम दिन राती।

सादर जपहु अनँग आराती।।

'अनंग' मानी कामदेव। 'आराती' माने नष्ट करनेवाला। हे भोलेनाथ, तुम्हारे साथ रहकर मेरा अनुभव है, आप

दिन-रात निरंतर 'राम-राम' रटते हो तो यह रामतत्त्व क्या है? मुझे समझाइए। स्पष्ट कीजिए कि इस नाम में क्या है? पहला अर्थ यह है कि शंकर भगवान चौबीस घंटे राम-राम रटतें हैं ऐसा होता है। दूसरा अर्थ, शंकर पार्वती को यों कहते हैं कि देवी, आप दिन में एक बार 'राम' बोल ले तो सहस्र नाम का पाठ हो जायगा। शंकर चौबीस घंटे राम-राम रटते हैं इसकी मैं साक्षी हूं। शिव तो रटते हैं। रटना ही चाहिए। पर अपने पास इतना समय है? तो आज प्रेक्टिकल अर्थ लेना चाहिए।

मैं रामकथा में कहता ही रहता हूं किसी भी सिद्धांत का देशकालानुसार संशोधन होना ही चाहिए। इस पर पुनर्विचार होना ही चाहिए। सत्य, प्रेम, करुणा पर पुन:विचार नहीं हो सकता। ये आदि परममूल्य है। पर 'तुम्ह पुनि राम राम दिन राती।' इसमें दो शब्द है 'दिन' और 'राती'; दिन और रात। शंकर तो चौबीस घंटे जाप जपते हैं। पर निरंतरता का सूक्ष्म अर्थ समझ लेना चाहिए। हमें पता भी नहीं यों श्वास निरंतर चलता है। मेरी समझ में यहां 'राम' 'राम' शब्द दो बार आया है, दिन और रात; पार्वती कहती है आप दिन में एक बार और रात में एक बार 'राम' बोलते हैं, मुझे लगता है यह आपकी निरंतरता का प्रतीक है। क्यों? हम भी प्रात:काल में एक बार 'राम' बोल ले। निरंतर जाप की ना नहीं कहता हूं। मैं निरंतर जपनेवाला आदमी हूं। इसका उद्घाटन मेरी साक्षी में हुआ है। अत: मैं इसके पक्ष में रहूंगा। पर निरंतरता का सूक्ष्म अर्थ भी हम समझना चाहिए। मैं कहता हूं, घर में पति-पत्नी चौबीस घंटे परस्पर 'राम-राम' कहते रहे तो क्या घर ठीकठाक रहेगा? प्लीज़, टेल मी। धमाल हो जाय न! इसका अर्थ यह है कि पति-पत्नी सुबह में एक बार 'राम-राम' कर ले और एक बार रात को कर ले तो निरंतरता है साहब! पर शर्त यही है कि यह बंद मत करना। माला फेरना बंद नहीं करना। जाप बंद नहीं करना। पर इसका अर्थ यह है बाप कि पीछे का शब्द 'अनंग आराती'; आप सकाम भाव से हरिनाम लेंगे तो आपको चक्र में करना पड़ेगा। पर निष्काम भाव से करेंगे तो सुबह एक बार और रात में एक बार ले तो आप धन्य-धन्य हो जायेंगे। आप शिव बन जायेंगे। इसका एक प्रेक्टिकल अर्थ यह भी होता है।

यहां रामनाम संकीर्तन में तेरह अक्षर का मंत्र चलता है। अत: स्वाभाविक रूप से 'राम' नाम को केन्द्र में रखें पर 'रामनाम' माने कोई भी नाम; कृष्णनाम, शिवनाम, दुर्गानाम कोई भी नाम, कोई भी प्रिय नाम। तुलसीदासजी ने कई जगहों पर 'राम' शब्द निकाल दिया। मात्र 'नाम' शब्द ही रखा। 'नाम प्रताप संभु अविनासी।' इसका संकेत ऐसा है कि कोई भी नाम चलेगा। 'राम' ही बोलना है ऐसा नहीं है।

नाम के साथ पांच वस्तु जुड़ी हुई है। एक, 'नाम' तो है ही। व्याकरण की दृष्टि से संज्ञा है और नाम किसी का भी ले सकते हैं। खराब क्षेत्र में या तो सिरफिरे के सामने नाम नहीं लेना चाहिए। नाम कोई भी ले सकते हैं। नाम महिमावंत है। कबीर साहब ने कहा है, 'नाम अनंत रहत है, जग में दूजा तत्त्व न कोई।' तो, नाम अनंत है।

दूसरे, कलियुग में परमात्मा का नाम महामंत्र भी है। आप 'कृष्ण-कृष्ण' बोलिए तो आप महामंत्र का जाप करते हैं। आप केवल राम-राम बोले तो महामंत्र का जाप है। 'महामंत्र सोई जपत महेसु।' तो नाम महामंत्र है। तीसरा, नाम औषधि है। नाम का सेवन श्रद्धा से हो तो मानसिक बीमारियों का नाश होता है। परंतु साहब, कलियुग के प्रथम चरण में भी कितने ही दृष्टांत वर्तमान जगत में है। नाम से व्यक्ति की शारीरिक बीमरी की मात्रा कम होती है। मैं ऐसा नहीं कहता कि आपको कोई बड़ी

बीमारी हुई हो तो आप केवल हरिनाम ले। डोक्टर की दवा ले। इसका अनुपान लो। नाम यह परम औषधि है। जिसे हरिनाम में निष्ठा है और हरिनाम परम औषधि है, डोक्टर की दवा इसका अनुपान है। नाम परम औषधि है। जिसे हरिनाम में निष्ठा है उसे हरिनाम परम औषधि है। डोक्टर की दवा अनुपान है। जब तक श्रद्धा उस हद तक न पहुंचे तब तक डोक्टर ने ही दवा को औषधि मानना। नाम को अनुपान मानना। शंकर ने दोनों मार्ग बताए हैं। मुंह बिगाड़कर दवा पीने से बेहतर है हरिनाम लेते-लेते पी जाना। ज़हर पीया तो हरिनाम के साथ पिया। तुलसी कहते हैं, 'जासु नाम भवभेषज।' यों सूक्ष्मदृष्टि से अभ्यास करें तो, मानो हमारी कमर में दर्द है और आप 'हाय' 'हाय' कर उठे; पर आप 'राम राम' कर उठे तो साहब, फर्क पड़ता है। थोड़ा समझना पड़ेगा। अभ्यास और निरंतरता ज़रूरी है।

चौथा, नाम देहधारियों का एक ऐसा आभूषण है जिसे कोई लूट नहीं सकता। नाम कंठाभरण है। वैष्णव आचार्यों से सुना है कि पालिकावालें परेशान करते कुत्तों को पकड़े तब उसके गले में पट्टा डाल दे तो पता चले कि यह कुत्ता किसका है। नाम का पट्टा जिसके गले में आ जाय तो हरि को पता चले कि यह मेरा है। 'रामचरित मानस' में ऐसा लिखा है कि 'सब भूषन भूषित बर नारी।' कोई भी सर्वांग सुंदरी आभूषण पहने, पर वस्त्र न पहने तो? व्यर्थ है। केवल वस्त्र पहने तो भी यह सादगीपूर्ण व्यवस्था है। लेकिन सोने-चांदी के आभूषण की व्यवस्था नहीं होती पर मैदान में पड़े इस नामरूपी आभूषण-मणि लेने की अपनी तैयारी हो तो अपना कितना बड़ा आभूषण बन सकता है!

पांचवां और अंतिम, रामनाम अपना सदैव का साथी है। परमात्मा का नाम हमारा स्थायी साथी है; वह निरंतर अपने साथ है। साधना में एक समय ऐसा आता है कि साधक नाम लेना बंद कर दे और नामी उस साधक का नाम लेना शुरू कर देता है। कबीरसाहब ने अपने अनुभव में कहा है कि -

कबीरा मन निर्मल भयो जैसो गंगा नीर।
पीछे पीछे हर फिरे कहत कबीर कबीर।।

परमात्मा मेरे पीछे फिर रहे हैं! ऐसा दूसरे संत ने भी कहा है -

माला जपो न कर जपो जिह्वा जपो न राम।
सुमिरन मेरा हरि करे मैं पावा विश्राम।।

अब हरि मेरा स्मरण करता है। ऐसा साधक ने अनुभव किया है। मीरां कहती है, कृष्ण मेरा जनम-जनम का साथी है।

तो, नाम के साथ पांच प्रकार के अमृत जुड़े हैं। नाम की ऐसी महिमा है। 'रामचरित मानस' में ऐसा लिखा है कि 'जाकर नाम सुनत सुभ होई।' हम नाम न ले पर सुने तो सुनने से भी शुभ होता है। जितना समय मिले बाप, नाम का आश्रय लेना। हम चौबीस घंटे का जाप न जप सके पर उसकी सूक्ष्म निरंतरता का जतन होना चाहिए। प्लीज़, नामकीर्तन में नकल मत कीजिए। इसमें अपनी अदा होती है। सबकी अपनी-अपनी अदा होती है; अपनी निष्ठा होती है। अंत में इतना कहूंगा कि नाम साधन भी है, साध्य भी है। प्रभु का नाम साधन भी है, साध्य भी है। महुवा के आंगन में निरंतर संकीर्तन होता है उसमें शामिल हुए लोगों को मेरा प्रणाम। व्यवस्थापकों को साधुवाद और पूर्वसूरियों को धन्यवाद।

('अखंड रामनाम संकीर्तन' महुवा (गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्य : ता. १५-४-२०१४)

श्री हनुमानचालीसा

श्री गुरु चरण सरोज रज, निज मन मुकुर सुधारि।
बरनउँ रघुबर बिमल जसु, जो दायक फल चारि।।
बुद्धि हीन तनु जानिके, सुमिरौ पवन-कुमार।
बल बुद्धि बिद्या देहु मोहिं, हरहु कलेश बिकार।।

जय हनुमान ज्ञान गुन सागर। जय कपीस तिहुँ लोक उजागर।।
रामदूत अतुलित बलधामा। अंजनि पुत्र पवन सुत नामा।।
महाबीर बिक्रम बजरंगी। कुमति निवार सुमति के संगी।।
कंचन बरन बिराज सुबेशा। कानन कुंडल कुंचित केसा।।
हाथ बज्र अरु ध्वजा बिराजै। काँधे मूंज जनेउ साजै।।
संकर सुवन केसरी नंदन। तेज प्रताप महा जग-वंदन।।
विद्यावान गुनि अति चातुर। राम काज करिबेको आतुर।।
प्रभु चरित्र सुनिबेको रसिया। राम लखन सीता मन बसिया।।
सूक्ष्म रूप धरि सियहिं दिखावा। विकट रूप धरि लंक जलावा।।
भीम रूप धरि असुर सँहारे। रामचंद्र के काज सँवारे।।
लाय सजीवन लखन जियाये। श्री रघुबीर हरषि उर लाये।।
रघुपति कीन्ही बहुत बडाई। तुम मम प्रिय भरत हि सम भाई।।
सहस बदन तुम्हरो जस गावै। अस कहि श्रीपति कंठ लगावै।।
सनकादिक ब्रह्मादि मुनीसा। नारद सारद सहित अहीसा।।
जम कुबेर दिगपाल जहाँ ते। कवि कोबिद कहि सकै कहाँ ते।।
तुम उपकार सुग्रीवहिं कीन्हा। राम मिलाय राजपद दीन्हा।।
तुम्हरो मंत्र बिभीषन माना। लंकेश्वर भए सब जग जाना।।
जुग सहस्त्र जोजन पर भानू। लील्यो ताहि मधुर फल जानू।।
प्रभु मुद्रिका मेलि मुख माहीं। जलधि लाँघि गये अचरज नाहीं।।
दुर्गम काज जगत के जेते। सुगम अनुग्रह तुम्हरे तेते।।
राम दुआरे तुम रखवारे। होत न आज्ञा बिनु पैसारे।।
सब सुख लहै तुम्हारी सरना। तुम रच्छक काहू को डरना।।
आपन तेज सम्हारो आपै। तीनों लोक हांक ते काँपै।।
भूत पिशाच निकट नहिं आवै। महाबीर जब नाम सुनावै।।
नासै रोग हरै सब पीरा। जपत निरंतर हनुमंत बीरा।।
संकट से हनुमान छुडावै। मन क्रम बचन ध्यान जो लावै।।
सब पर राम तपस्वी राजा। तिन के काज सकल तुम साजा।।
और मनोरथ जो कोई लावै। सोई अमित जीवन फल पावै।।
चारों जुग परताप तुम्हारा। है परसिद्ध जगत उजियारा।।
साधु संत के तुम रखवारे। असुर निकंदन राम दुलारे।।
अष्ट सिद्धि नौ निधि के दाता। अस बर दीन्ह जानकी माता।।
राम रसायन तुम्हरे पासा। सदा रहो रघुपति के दासा।।
तुम्हरे भजन राम को पावै। जनम जनम के दुख बिसरावै।।
अंत काल रघुबर पुर जाई। जहाँ जन्म हरिभक्त कहाई।।
और देवता चित्त न धरई। हनुमत सेई सर्व सुख करई।।
संकट हरे मिटै सब पीरा। जो सुमिरे हनुमत बलबीरा।।
जै जै जै हनुमान गोसांई। कृपा करौ गुरुदेव की नांई।।
जो सत बार पाठ करे कोई। छूटहि बंदि महा सुख होई।।
जो यह पढै हनुमान चालीसा। होय सिद्धि साखी गौरीसा।।
तुलसीदास सदा हरि चेरा। कीजै नाथ हृदय महँ डेरा।।

पवन तनय संकट हरन मंगल मूरति रूप।
रामलखन सीता सहित हृदय बसहु सुर भूप।।

|| जय सीयाराम ||